TEXT FLY WITHIN
THE BOOK ONLY

TIGHT BINGING
BOOK

TEXT CROSS
WITHIN THE
BOOK ONLY

UNIVERSAL LIBRARY

OU_182297
UNIVERSAL LIBRARY

OSMANIA UNIVERSITY LIBRARY

Call No. H 82 Y29N

Acc No. P.G.H 3759

Author : यशपाल

Title : नशे नशे की बात

Osmania University Library

Osmania University Library

H P.G.H

Call No. 82 Accession No. 3759

Y29N

Author यशपाल

Title मेरी तेरी उसकी बात

This book should be returned on or before the date last marked below.

विप्लव प्रकाशन—२६

नशे नशे की बात !

तीन दृश्य कहानियां अथवा नाटक

नशे नशे की बात !

रूप की परख

गुडबाई दर्दे-दिल !

यशपाल

(परिमार्जित दूसरा संस्करण)

विप्लव कार्यालय, लखनऊ

जून १९५९

तीन रुपया

प्रकाशक—

विप्लव कार्यालय

ल ख न ऊ

अनुवाद सहित सर्वाधिकार लेखक द्वारा स्वरक्षित

मुद्रक—

साथी

लखनऊ

स[illegible]ण

विचार द्वारा आचार का मार्ग ग्रहण
करने की भावना को समर्पित

यशपाल

क्रम

१—नशे-नशे की बात ! ....

२—रूप की परख ....

३—गुडबाई दर्दे-दिल ! ....

दो शब्द

यह तीन दृश्य-कहानियां इस ढंग से लिखी गयी हैं कि पढ़ने में दृश्य ानी का प्रयोजन पूरा कर सकें और रुचि अथवा अवसर होने पर रंगमंच भी उतारी जा सकें।

इन नाटकों की रंगमंच सम्बन्धी सफलता के बारे मे इतना कहना ासंगिक न होगा कि 'नशे नशे की बात !' और 'गुडबाई दर्दे-दिल !' का नय लखनऊ तथा दूसरे स्थानों पर किया जा चुका है। 'नशे नशे की .!' का सर्व प्रथम अभिनय ३१ अप्रैल १९५१ की सध्या लखनऊ के 'छतर .ल हाल' मे 'विशिष्ट वर्ग' के कला पारखियों के सामने किया गया था। नय में भाग लेने वाले सभी लोगों के नौसिखिये (amatures) होने पर नाटक और उसका अभिनय अत्यन्त सफल समझा गया था। हाल मे स्थित लोगों मे मे एक भी व्यक्ति हिलता-जुलता या असतोष प्रकट करता खा गया। 'गुडबाई दर्दे-दिल !' का अभिनय 'अवध वूमेस एसोसियेशन' अभिनय मे रुचि रखने वाली सदस्याओं ने अपने अधिवेशन के समय किया । उसके बाद अन्य स्थानों पर भी हुआ। रगमंच के अनुभव की कसौटी ःकों की जाच हो जाने के बाद, पुस्तक रूप मे प्रकाशित करते समय . आवश्यक परिवर्तन और परिवर्धन कर दिये गये है।

नशे नशे की बात !' और 'रूप की परख' के अभिनय का समय प्रायः क घण्टे और बीस मिनिट के लगभग है और 'गुडबाई दर्दे-दिल !' के अभि- य का लगभग आध घण्टे। नाटक का आयोजन परिमित व्यय और सीमित ाधनों से करने वाले लोगो के लिये 'नशे नशे की बात !' और 'रूप की परख' में आरम्भ से अन्त तक दृश्य परिवर्तन करने की आवश्यकता न होना विशेष सुविधाजनक हो सकता है। 'गुडबाई दर्दे-दिल !' मे बीच मे एक बार पटपरिवर्तन आवश्यक होगा।

लखनऊ मे 'नशे नशे की बात !' का अभिनय होने पर कुछ साम्प्रदायिक पत्रों में नाटक के विचारतत्व पर आलोचना हुई थी। इस आलोचना का सार यह था कि नाटक के घटनाक्रम द्वारा आध्यात्मिकता के नशे के प्रति शराब

के नशे से भी अधिक वितृष्णा प्रकट करने की चेष्टा की गई है। ऐसा निष्कर्ष आलोचकों की आध्यात्मिकता के प्रति अति श्रद्धा के कारण ही निकाला गया है। शराब के नशे की प्यास के कारण या उसमें डूब कर अपने पारिवारिक और सामाजिक कर्तव्य के प्रति उपेक्षा के लिये नाटक में कोई सहानुभूति या सहनशीलता नहीं दिखाई गई। यही भावना आध्यात्मिकता के नशे से कर्तव्य की उपेक्षा के प्रति है। आध्यात्मिकता के नशे के प्रति समाज में जो आदर की भावना जमा दी गई है, उसके प्रति विद्रूप अवश्य है।

'रूप की परख' का कथानक पारिवारिक जीवन की एक साधारण घटना के आधार पर लिया जाना कुछ आलोचकों को नाटक की विशेषता को कम करता जान पड़ा है या इस विषय पर अन्य लेखकों द्वारा पहले बहुत कुछ लिख दिया जाना इस नाटक की नवीनता को समाप्त कर देता है। यह नाटक नवीनता के दावे के लिये नहीं लिखा गया है। केवल नवीन बातों पर ही लिखने की प्रतिज्ञा के लिये गर्व करना व्यर्थ है। यदि किसी घिसी-पिटी बात को सजीव बना दिया जा सके तो वह भी कम सफलता नहीं। इस विषय में जिस ढंग से जो कुछ लिखा गया है या अब तक मुझे देखने को मिला, उससे संतुष्ट न होने के कारण मैंने भी प्रयत्न किया है।

'गुडबाई दर्दे-दिल !' शीर्षक से एक कहानी मेरे 'वो दुनिया' कहानी संग्रह में प्रकाशित हो चुकी है। नाटक के कथानक और उस कहानी में बहुत कुछ समता होते हुये भी इनमे अन्तर भी बहुत है। दोनों के वार्तालाप और परिणाम तक पहुँचने के ढंग में बहुत अन्तर है। 'गुडबाई दर्दे-दिल !' में प्रेम की भावना का परिहास कर देना ही अभीष्ट नहीं। अभिप्राय है कि प्रेम यदि व्यक्तियों के परस्पर आकर्षण का सुसंस्कृत रूप है तो व्यक्ति की यह संस्कृति केवल यौन-आकर्षण में ही प्रकट न होकर सामाजिक व्यवहार में भी प्रकट होनी चाहिये। मनुष्य के दुख-दर्द के प्रति रणजीत की हृदयहीनता देखकर शशि, उसकी अपने प्रति सहृदयता में विश्वास नहीं कर सकती। सामाजिक व्यवहार में दिल का दर्द न होने पर केवल यौन-आकर्षण में ही दिल के दर्द का दावा केवल अभिनय मात्र है, विडम्बना है ?

यशपाल

बैशाखी १९५२

नशे-नशे की बात !

एकांकी नाटक

अथवा

दृश्य कहानी

पात्र

राधेमोहन--बड़े भाई की मृत्यु के बाद अनिच्छा से शराब की दुकान सम्भालने के लिये विवश, कालिज की शिक्षा प्राप्त, भावुक, सुधारवादी नवयुवक।

छिद्दू-काका--राधेमोहन के परिवार का पिता के समय से चला आया, स्वामीभक्त और शुभचिन्तक बूढ़ा नौकर।

कामता—शराब की लत में अपने परिवार से निरपेक्ष, कारखाने का मजदूर।

किसनलाल—कभी-कभी शराब खरीदने वाला गाहक।

बद्री—अभ्यासी शराबी। कामता का परिचत गाहक।

कामता की बहू—अपने पति की शराब पीने की आदत से और अपने बच्चों का पेट भर सकने के लिये परेशान कामता की स्त्री।

नन्दलाल--प्रौढ़ आयु के कांग्रेसी भद्र पुरुष, लोगों को समझा-बुझा कर नशाखोरी छुड़वा कर समाज का सुधार करने की चेष्टा करने वाले सज्जन।

जीवन—सेवासमिति और समाजसुधार के कामों में भाग लेने वाला महाशय नन्दलाल का सहायक युवक।

लड़का गाहक--अपने चाचा के लिये शराब खरीदने के लिये आने वाला वयस्क लडका।

जीजी—राधेमोहन की विवाहित बहिन। पति के गृहस्थ छोड़कर सन्यास ग्राहण कर लेने के कारण अपनी सन्तान सहित भाई के पास आने के लिये विवश स्त्री।

अवसर और समय

होली से पहले दिन की संध्या

नोट--इस नाटक में छिद्दू-काका द्वारा प्रयोग की गई भाषा साधारणत: नगरों में प्रयोग की जाने वाली हिन्दी है। रंगमच पर स्थानीय वातावरण उत्पन्न करने के लिये छिद्दू-काका के मुख से अवध में अवधी, पश्चिमी उत्तर प्रदेश में ब्रजभाषा या बुन्देलखंडी अथवा हरियाना की लोकभाषा का प्रयोग किया जा सकता है।

नशे-नशे की बात

पर्दा उठता है

संध्या का समय है। अभी अंधेरा घना नहीं हुआ है। गलियों और मकानों में रोशनी नहीं हुई है।

रंग मंच पर एक देशी शराब की दुकान है। दुकान के भीतर लकड़ी का एक जंगला लगाकर दुकानदार के बैठने का स्थान और शराब की आलमारियां गाहकों की पहुंच से सुरक्षित कर दी गई है। बिना किवाड़ों की आलमारियाँ दीवारों के साथ सटी है। भिन्न-भिन्न रगों की शराब की बोतले आलमारियों के अलग-अलग खानों में कतारों मे लगी हैं। ठेकेदार के बैठने के लिये जंगले के भीतर एक तख्त है। तख्त पर एक साफ़-सुथरा गाव तकिया लगा है। दुकान्दार के सामने तख्त पर एक सन्दूकचीनुमा डेस्क है। डेस्क पर अंग्रेज़ी अखबार तहाया हुआ रखा है। जंगले के बाहर दीवार के साथ दायीं ओर ग्राहकों द्वारा लौटाई हुई कई खाली बोतलें बेतरतीब पड़ी है। जंगले के बाहर बायीं ओर दीवार में दरवाजे से जीना दिखाई दे रहा है। यह जीना दुकान के ऊपर रिहाइशी जगह को जाता है।

जंगले के बाहर एक बेंच जंगले से सटा हुआ पड़ा है। बेंच पर परिवार और दुकान का पुराना नौकर छिद्दू-काका एक मैली सी धोती घुटनों तक पहने है। शरीर पर कुर्ता और मिरजई है। उसके कपड़ों पर जहाँ-तहाँ गुलाबी, हरा और पीला रंग पड़ा है और जगह-जगह आलू मे बनी 'उल्लू' 'गधा' आदि की होली की मोहरें लगी है। छिद्दू-काका का बूढ़ा शरीर दुबला-पतला है। जान पड़ता है कि उसने आयु कठिन मेहनत में बिताई है। दाढ़ी

मुड़ी हुई है और खिचड़ी मूँछें लम्बी और झुकी हुई हैं। छिद्दू-काका बूढ़े, थके स्वर में होली का गाना गुनगुना रहा है—

गोरी मारो भर पिचकारी,
होली खेलें कृष्णमुरारी।

छिद्दू होली गाते-गाते हथेली पर सुरती फटक कर निचले होंठ में दबा हथेली अपने कपड़े पर पोंछ कर अपने गीत की कड़ी समाप्त किये बिना जीने की ओर देख पुकार लेता है।

छिद्दू ने पुकारा—"छोटे बाबू ! ओ छोटे बाबू !"

छिद्दू ने पल भर उत्तर की प्रतीक्षा की। उत्तर न पाकर मुंह पर हाथ रख कुछ ऊंचे स्वर में फिर पुकारा—"लल्ली ! ओ लल्ली ! अरे छोटे बाबू को भेजो दुकान मे।....क्या कर रहे हैं छोटे बाबू ?"

छिद्दू ने जीने की ओर देखकर सिर खुजलाया और बोला—"किताब, अखबार पढ़ रहे होंगे और क्या ? खबरे कित्ता पढ़ डाला। क्या बनेगा पढ़-पढ़कर ? दिन पढ़ें, रात पढ़ें" छिद्दू हाथ मटकाकर बोला, "अपना जो काम है, सो न करेंगे। दुकान पर न बैठेंगे !"

जीने से तेजी से उतरते कदमों की आहट आई और जीने के दरवाजे में दुकान का मालिक नवयुवक राधेमोहन साफ़ कुर्ता-धोती पहने सामने आगया। राधेमोहन जीना उतरते समय धोती के निचले छोर को एक हाथ मे संभाले था। दूसरे हाथ में एक किताब थमी थी। किताब के पन्नों में दबी उँगली से प्रकट था कि वह किताब पढ़ते-पढ़ते पुकार सुनकर उतर आया था। युवक के कुर्ते में खोंसा फाउन्टेनपेन, उसकी आँखों पर नये ढंग के काले, मोटे फ्रेम के चश्मे और सिर के बालों की काट मे कालेज की शिक्षा का आभास झलक रहा था। वह चेहरे-मोहरे मे लगभग बाइस वर्ष का सरल तथा भावुक व्यक्ति जान पड़ता था।

राधेमोहन ने जीने से दुकान में कदम रखते हुये, भौं चढ़ा कर पूछा—"क्या है काका ? क्यों पुकार रहे हो बार-बार ? कौन आया था ?"

छिद्दू ने उपेक्षा में हाथ हिला कर उत्तर दिया—"आये थे तुम्हारे नन्दलाल बाबू और जीवन भैया।"

राधेमोहन ने प्रश्नात्मक मुद्रा मे त्योरियाँ डाल कर पूछा—"तो फिर ?"

छिद्दू ने उपेक्षा मे हाथ हिलाकर कहा—"अरे हमने उनको रास्ता दिखा दिया।" उसने सड़क की ओर सकेत किया, "कह दिया बाबू सो रहे है ।"

राधेमोहन ने क्रोध प्रकट किया—"छिद्दू-काका, यह तुम बड़ी ज्यादती करते हो। उन्हें कोई जरूरी काम रहा हो तो ?"

छिद्दू ने उपेक्षा मे दूसरा हाथ हिला दिया—"हमें मालूम है उन का काम। आये बड़े काम वाले।" वह समझाने के लिये नवयुवक की ओर हाथ उठाकर बोला, "यही समझायेंगे, लाइसेंस से इस्तीफा दे दो। सरकार सराब बन्द कर रही है। तुम भी अपनी दुकान छोड़ दो।" उसने हाथ से दुकान के बाहर की ओर संकेत किया, "और अभी फिर आते होंगे। पड़ोस में गिरजा बाबू के ही तो गये है।"

राधेमोहन के माथे की त्योरियाँ गहरी हो गईं—"वे चले गये थे तो फिर हमें क्यों पुकारा ?"

छिद्दू ने विस्मय प्रकट करने के लिये हाथ फैला दिया—"क्यों पुकारा ? अरे भैया, दुकान के मालिक हो, दुकान पर बैठोगे नहीं ? अरे कल होली है। बरस दिन की बिकरी का बखत है। ऐसे बखत मालिक को दुकान पर रहना चाहिये छोटे बाबू ! मालिक फिर मालिक है। मालिक दुकान पर बैठें, हम घर का दूसरा काम-काज देखें।"

राधेमोहन झुझला उठा—"हो जायेंगे घर के काम। तुम अच्छे भले बैठे तो थे न खामुखा हमें बुला लिया।"

छिद्दू ने समझाने के ढंग से राधेमोहन की ओर हाथ बढ़ाकर कहा—"छोटे बाबू, ऐसा नहीं कहते। दुकान और गाहक मालिक का मुंह देखते है। बड़े मालिक नित्त-नेम मे दुकान पर बैठते रहे तो कारोबार इतना पनपा, फूला और फला। छोटे बाबू, तुम तो दुकान से ऐसे कतराते हो जैसे कोई सरीके में खुशी देख कर उदास हो, हां, और क्या !"

राधेमोहन झमक उठा—"अच्छे भले बैठते तो है। अब यहीं गड़े रहें क्या दिन भर ?" वह गद्दी के जंगले का दरवाजा खोलकर असंतोष में जोर मे पाँव पटकता हुआ गद्दी पर जा बैठा और तुरन्त पुस्तक खोल कर पढ़ने में रत हो गया।

छिद्दू ने पुस्तक में ध्यान लगाये राधेमोहन की ओर देख कर गम्भीर स्वर में समझाया—"बाबू, यह दुकान है तो सब कुछ है। बड़े कह गये हैं, खेत और बनज संदेशों से नहीं चलते !"

राधेमोहन पुस्तक में तन्मय रहा ।

छिद्दू उत्तर न पाकर जंगले के बाहर पड़ी खाली बोतलों की ओर झुक गया और फिर राधेमोहन से बोला—"छोटे बाबू, यह खाली बोतलें पड़ी हैं यहाँ । कहो तो कोठे पर पहुँचा दें' कहो तो यहाँ ही करीने से लगा दें ?"

पुस्तक में रत राधेमोहन ने कोई उत्तर न दिया । छिद्दू ने उसकी ओर देख विरक्ति से हाथ हिलाते हुये बोतलों के समीप बैठ कर उन्हें करीने से सजाने लगा । कुछ याद आने पर फिर घूम कर छोटे बाबू की ओर देखा ।

छिद्दू बोला—"छोटे बाबू, आज कोई मेहमान तो नहीं आने वाले हैं ?"

राधेमोहन ने उद्विग्नता से उसकी ओर देखा—"छिद्दू-काका, पढ़ने नही दोगे ? मेहमान का हमें मालूम होता तो हम खुद नही कह देते ? अब तुम ऊपर क्यों नहीं जाते ?"

छिद्दू बोतलों को करीने से रखते हुए बोला—"जाते हैं बाबू, जाते है ! हम तो आप ही जा रहे थे । तुम्हारी ही राह देख रहे थे । बाबू, सुबह मुडेरे पर कागा बोल रहा था, इससे हमने सोचा, पूछ देखें !"

कामता दुकान का पुराना गाहक है । 'वह ऐ बाबू''' ऐ बाबू' पुकारता हुआ दुकान में आ गया ।

कामता की चाल से प्रकट था कि शिथिलता के कारण उसके अंग झोल खा रहे थे । वह घुटनों तक मैली धोती और कबाड़ी के यहाँ से खरीदा हुआ, कई जगह से मरम्मत किया हुआ, चिथड़ा-सा कोट पहने था । कुरता न होने के कारण कोट में से उसके सीने के बाल दिखाई दे रहे थे । सिर पर पट्ठेदार काली टोपी थी । टोपी के भीतर का पट्ठा टूटकर दब गया था । टोपी के नीचे के किनारे पर चिकनाई और गर्द जमी थी । कामता के चेहरे पर बढ़ी हुई हजामत असंयम और लोकमत की उपेक्षा का प्रमाण था । सिर और दाढ़ी-मूंछ के काले बालों के कारण उसकी आयु तीस-पैंतीस और चेहरे पर छायी शिथिलता और पलकों के नीचे फूले हुए मांस के कारण पचास-पचपन बरस तक कुछ भी समझी जा सकती थी । कामता की पुकार सुनकर राधेमोहन और छिद्दू प्रश्नात्मक दृष्टि से उसकी ओर देखने लगे ।

कामता ने दीनता से गरदन बायीं ओर कंधे पर झुकाये, हाथ जोड़े गिड़गिड़ा कर कहा—"ऐ बाबू ! आज निरास न करो !"

छिदद्दू ने बैठे ही बैठे कामता की ओर घूम कर स्वागत के स्वर में पुकार लिया—"कहो भैया कामता, होली कैसी जम रही है ?"

कामता ने छिद्दू-काका को उत्तर देने के लिये अनुत्साह से हाथ हिलाकर उत्तर दिया—"अरे छिद्दू-काका, अब क्या जमेगी होली ? तुम जानो, होली जब जमती थी, तब जमती थी।"

राधेमोहन ने हाथ की किताब को डेस्क के कोने पर रखकर दृढ़ता प्रकट करने के लिये गर्दन सीधी कर तरजनी उठाकर चेतावनी दी—"कामता, हमने तुम से एक बार नहीं बीस बार कह दिया, भलमनसाहत भले ही आदमी से निभती है। पिछला उधार जब तक नहीं दे जाओगे, हम कुछ नहीं देंगे। अरे अब उधार तो हम देगे ही नहीं !" उसने कामता को दूर हटाने के संकेत में हाथ छिटका दिया।

छिद्दू ने मालिक के समर्थन में कहा—"भैया कामता, उधार का भी तो कोई कायदा होता है। पल्ले से तुम्हें उधार दें फिर तुम से झगड़ा करके बुरे बनें ! उधार माँगने तो लाला तुम यहाँ आ गये और तकादा करने जायेंगे हम तुम्हारे घर ?"

कामता ने छिद्दू की ओर मिन्नत में हाथ जोड़कर कहा—"अरे छिद्दू-काका, ऐसी न कहो। बखत की बात होती है काका !" उसने राधेमोहन की ओर खुशामद से हाथ बढ़ाया, "मालिक, आज ऐसी जरूरत न होती तो हम आते थोड़े ही। बड़ी लाचारी का मामला है। छोटे बाबू, तुम जानो हम कभी झूठ थोड़े ही बोलते हैं। गंगा जी की कसम मालिक, बड़ी लाचारी का मामला है।"

छिद्दू हाथ उठाकर बोला—"लाचारी तो है ही सो कौन नहीं जानता ? होली का मामला है। तुम अपना उधार चुका जाओ, अपनी चीज ले जाओ, बस और क्या भैया !"

कामता खुशामद में छिद्दू की ओर झुक गया—"काका, तुम जानो हमें तो पहले उधार की आप ही बड़ी सरम मालूम हो रही है। तुम जानो हम कभी ऐसे उधार रखते थोड़े ही हैं। काका, वह तो लाचारी का मामला है।" वह फिर राधेमोहन की ओर घूम गया, "मालिक, जो ऐसी लाचारी न होती तो यों आते थोडे ही आज। ऐसे बखत मालिक का ही आसरा होता है बाबू।"

राधेमोहन ने फटकार बताने के लिये फिर हाथ की उंगलियाँ छिटकाकर क्रोध

प्रकट किया— 'लाचारी है, क्या लाचारी है ? एक सांझ होश में रह जाओगे तो क्या बिगड़ जायगा ? कौन अनर्थ हो जायगा ?" वह मुंह मोडकर पुस्तक उठाकर पढने लगा ।

कामता ने राधेमोहन की ठोढ़ी की ओर हाथ बढ़ाकर और भी गिड़गिड़ा कर प्रार्थना की—"अरे बाबू, गंगा जी की कसम बहुत ही लाचारी का मामला है । तुम जानो, ऐसा ही मामला आन पड़ा है । नही तो हम कभी नही आते ।" उसने झुककर राधेमोहन के पाव की ओर हाथ बढ़ा दिया ।

राधेमोहन ने खिन्नता से पुस्तक को डेस्क पर पटक दिया और अधिक ऊंचे स्वर में झुंझलाया—"अ-अरे हम पूछते है, क्या ल-लाचारी है ? कौन तुम्हारे पेट में मरोड़ उठ रहे है या सिर में दर्द हो रहा है और यह कोई दवा है कि जरूर पोनी होगी और फिर चगे होकर उधार चुकाने आओगे ?"

कामता ने दोनता और व्याकुलता प्रकट करने के लिये अपने पावों पर बोझ बदलते हुए रहस्य के स्वर मे गिड़गिड़ाकर कहा—"अरे बाबू, गगाजी की कसम, ऐसी ही लाचारी का मामला है । मालिक तुम जानो, बीमारी मे बढ़कर लाचारी का मामला है बाबू !" और फिर सहसा चुनौती के स्वर में बोला, "कल तुम्हारा उधार न चुकता कर दे तो अपने बाप की औलाद नही ।" उसने ने मूछ पर हाथ फेरा और फिर खुशामद में राधेमोहन की ठोढ़ी की ओर हाथ बढ़ा दिया, "हाँ छोटे बाबू !"

राधेमोहन ने कामता का हाथ परे हटा दिया -- "हटो जी, बहुत देखली तुम्हारी कसम । सिर न खाओ । एक बार कह दिया, सौ बार कह दिया ।" वह फिर पुस्तक उठाकर पढ़ने लगा ।

कामता छिद्दू की ओर घूम गया और बहुत बेबसी मे गिड़गिड़ाकर पुकारा - "काका !"

छिद्दू ने बैठे ही बैठे परेशानी में हाथ फैला दिये -- "कामता, तुम्हारे लिये कौन बोले ? पहली बोतल ले गये थे तो कौन कसम नहीं खायी थी तुमने ? दूसरी बोतल उधार मांगने आये तो खायी हुई कसमें फिर से खा गये । हम पूछते है, अब कौन कसम बाकी है जो फिर कसम खा रहे हो ?"

कामता छिद्दू से सहायता न पाकर फिर खुशामद के लिये जंगले पर झुक गया —"मालिक · !"

छिद्दू पीछे से आहट सुन झिझक कर चुप रह गया। उसका परिचित किसनलाल आ गया था।

किसनलाल कारखाने में माहवार तनखा पाने वाले अच्छे मजदूर की स्थिति का जान पड़ता था।

किशनलाल ने कामता की ओर उपेक्षा से देखकर दस रुपये का नोट राधेमोहन की ओर बढ़ा दिया—"बाबू, एक सतरा तो दिलवा दो।"

छिद्दू घुटनों पर हाथ रख कर अपने स्थान से उठ खड़ा हुआ—"अरे किसनलाल बाबू, जैरामजी की। बड़े दिनों मे दिखायी दिये बाबू!"

किशनलाल ने छिद्दू को जैरामजी से उत्तर दिया—"अरे भैया, होली का मौका है। हमने कहा एक ला कर घर मे रख लें। दद्दा, मिलने-जुलने वाले आ जाते है न। आस करके आते है, उन्हें किस मुंह से न पिलाये?"

छिद्दू ने समर्थन किया—"सो तो है ही भैया। होली का मौका ठहरा। बाबू, तुम्हारे घर ही नहीं जायेगी तो क्या साले भुक्कड़ पियेंगे इसे? सरीफ खानदानी लोगों की ही तो यह चीज है। वे तो साले भंगेड़ी है बाबू, जो भांग पीकर पड़े रहते है। भांग भुक्खड़ नसा है बाबू!

छिद्दू ने अपनी बात कहते-कहते जंगले के किवाड खोल भीतर से बोतल ला कर किसनलाल को थमा दी। किसनलाल बोतल लेकर चल दिया। कामता ने उसके हाथ मे थमी बोतल को तृषित आंखो से देखा और बेबसी मे होंठ चाट लिये।

कामता फिर राधेमोहन की ओर जंगले पर झुककर बोला—"मालिक··!"

राधेमोहन क्रोध में पुस्तक पटककर जोर से गुर्रा उठा—"कामता, तुम परेशान कर देते हो। मुहल्ले भर में जाकर पूछ लो जो हम किसी को उधार देते हों? तुम्हारा जितना खयाल करते है, उतना ही तुम सिर चढ़ते जाते हो।"

छिद्दू ने कामता को संबोधन किया—"कामता भैया, तुम बड़े मालिक के बखत के गाहक हो, इससे छोटे बाबू तुम्हारा इतना लिहाज करते है और तुम लिहाज मिटा देने की कसम खाये बैठे हो। भैया, तुम्हें उधार दिलायें तो दूसरे को किस मुंह से इनकार कर दें··· बोलो!"

कामता छिद्दू की ओर मुड़ गया—"अरे काका, हम किसी से जाकर कहते हैं कि उधार लिया है। कोई हमारे सामने आकर कह दे कि हमने कभी किसी से कहा हो कि हमने उधार लिया। काका, यह तो आपस की बात है।"

राधेमोहन ने कामता की जिद्द से झुझलाकर पुस्तक बन्द कर दी और बोला—"अरे और कौन कहेगा ? तुम्हें उधार देते है तो तुम्हारी घरवाली ही आकर खरी-खोटी सुना जाती है। एक तो पल्ले का उधार में दो दूसरे गालियाँ सुनो। तुम्हारी औकात नहीं है तो क्यों पीने-मरने आते हो !"

छिद्दू ने कामता की ओर हाथ बढ़ाकर कहा—"और क्या भैया, उस महीना बन्द पर तुमने पिछले उधार के पैसे चुकता किये थे। खाली हाथ घर पहुँचे होगे। जानते हो, तुम्हारी घरवाली यहाँ आ कर कैसी रार मचा गई ?" उसने समझाने की मुद्रा में कामता की ओर हाथ उठा दिया, "भैया, आदमी हाथ में रकम पाता है तो गाली भी सह जाता है। दुधारी गाय की ही लातें सही जाती हैं। तुम्हें पल्ले का कर्ज मे दो, सूद में गाली सुनो।"

कामता ने छिद्दू से काम बनता न देख कर फिर चिरौरी से राधेमोहन की ठोढ़ी छूने के लिए हाथ बढ़ाकर बहुत ही विनीत स्वर में कहा—"बाबू, ऐसी बातें न करो। मालिक, कभी तुम्हारा उधार रुका हो तो बताओ ?" उसने अभिमान में गरदन ऊंची कर ली, "आज दस बरस मे सिवा इस ठेके के और कहीं कदम रक्खा हो तो कोई कह दे ?" वह छिद्दू की ओर घूम गया और चुनौती की मुद्रा में बाँह फैला दी, "तुम्हीं कह दो छिद्दू-काका। हां, कहो !"

छिद्दू ने अनुमोदन में सिर हिलाया—"सो तो भैया, यह तुम्हारी अपनी दुकान है। कबूतर अपने ठिये पर ही बैठता है। द्वार-द्वार घूमना कोई इज्ज़तदार आदमी का काम है ?"

कामता की गर्दन छिद्दू का समर्थन पाकर अभिमान और अधिकार से और ऊँची हो गई बोला—"और क्या छिद्दू काका, और क्या ? हम कहते है, किसी ने हमें दूसरे ठेके पर कभी देखा हो तो दस जूते हमारे सिर पर मार लो।" कामता ने सिर मे टोपी उतार कर हाथ मे लेकर सिर झुका दिया और राधेमोहन की ओर घूम गया, "बाबू, अपने तो साहूकार को ऐसे समझते है जैसे जजमान तीरथ के पन्डे को समझें।

अरे भैया साहूकार तो भगवान का रूप है। उसे छोड़कर दूसरी जगह जायँ, अपनी आकबत बिगाड़ें ? जब तक जिन्दा हैं, तुम्हारे ही द्वारे इज्जत बनी रहे, और क्या ? तुम्हीं कहो छिद्दू काका, ठीक नहीं कहते हम ?"

छिद्दू ने समर्थन में सिर हिलाया--"सो तो है ही। सो तो है ही। ठीक ही कह रहे हो कामता। भलेमानुसों का यही तरीका है भैया ! साहू और खसम कहीं बदले जाते है ?"

कामता ने उत्साहित होकर राधेमोहन की ठोढ़ी छूने के लिये फिर हाथ बढ़ाया--"मालिक रुपया तुम्हारा मारा नहीं जा सकता। तुम्हारे उधार को तो हम ऐसा जानते है, जैसे गाय का रकत !"

राधेमोहन ने घृणा से कामता का हाथ परे हटा दिया--"कामता तुम आदमी हो कि जानवर ! सौ बेर कह दिया तुम से कि उधार नहीं देंगे। तुम्हें उधार मिलता हो तो जहाँ मिले, ले लो !"

कामता ने हाथ झटक दिया जाने पर भी हाथ जोड़ दिये और अधिक गिड़-गिड़ा कर मिन्नत की--"बाबू, ऐसी बेरुखी मत दिखाओ। साहूकार और गाहक का रिस्ता ऐसा नहीं होता बाबू ! हम तो दूसरे के द्वारे जाना ऐसा समझते है जैसे औरत अपने मरद को छोड़ दूसरे के यहाँ जा बैठे।"

छिद्दू ने अपने घुटनों को कौली में बाँधे समर्थन में अपने पूरे शरीर को झुलाते हुए स्वीकार किया--"सच कहते हो भैया कामता, तुम भी सच कह रहे हो।"

कामता ने छिद्दू के समर्थन से उत्साहित होकर आशा में दोनों की ओर बारी-बारी से देखा और बोला--"भैया, इज्जत का सवाल है। दो मेहमानों को घर बैठा कर आया हूँ, समझे ! नहीं तो तुम जानो अपनी इज्जत का खियाल किसे नहीं होता। हमें तो पहिले उधार की खुद ही बहुत सरम........"

कामता किसी के आने की आहट पाकर चुप हो गया। मुहल्ले का पड़ोसी बद्री दुकान में आ गया। उसके कदम नशे के प्रभाव से कुछ शिथिल थे। बद्री झूमता हुआ शिथिल स्वर में गुनगुना रहा था--'काहे मटकावे नैना ठगनी........'

कामता बद्री को देख बोल उठा—"कहो बद्री महतो, कैसे रंग जम रहे हैं ?"

बद्री ने कामता की ओर तिर्छी नजर डालकर आंखें फेर लीं—"जै रामजी की राधे बाबू ! अंटी से पैसे निकालते हुए उसने घूमकर कामता की ओर देखा, "हां कामता भैया, जैरामजी की भैया, जम नहीं रहा तो क्या तुम्हारी दुआ से" उसने मूंछ पर हाथ फेरा, "दूसरी लिए जा रहे हैं।"

कामता की आंखें ईर्षापूर्ण विस्मय से फैल गईं—"दूसरी लिए जा रहे हो ?"

बद्री ने छिद्दू को सम्बोधन किया—"छिद्दू काका, एक महुआ तो और दिला दो। तुम जानते हो काका, कल होली है न !"

छिद्दू घुटनों पर हाथ टेककर उठा—"अरे महतो, कौन नहीं जानता होली है। आज ही तो बखत है इस चीज का।" वह बोतल निकालने के लिए जँगले के भीतर चला गया।

बद्री कामता को सुनाकर मूंछों पर हाथ फेरते हुए हँसकर बोला—"भैया जग्गू, गफूर, माधो सब आये हुए है। दूसरी लिये जा रहा हूं। गफूर साला एक अद्धा साथ लिये आया था। हमने कहा, साले बड़े धन्ना सेठ के नाती बनते हो। हमारे दरवाजे पर साथ लेकर आये हो ? हमें रईसी दिखाने चले ! अरे हम तुम्हें नहला दें, नहला दें !" बद्री जोर से हंस पड़ा, "देखे तो साले को ! हमने तो सारी दौलत इसी में फूंक दी। हमें क्या सेखी दिखाओगे ?" उसने कामता से आंखें मिलाकर पूछ लिया, "तुम क्या अभी आ रहे हो ?"

कामता ने अपना दैन्य छिपाने के लिये खीसें निपोर लीं—"तुम दूसरी लिये जा रहे हो ? हम तो मुलुआ के यहाँ चले गये थे, बस अभी लगे आरहे है।"

बद्री ने छिद्दू से बोतल लेकर अंगोछे में लपेट ली और कामता की ओर देखा—"तो आओ, हमारे यहाँ आओ।"

कामता का स्वर पिघल गया—"तुम्हारे यहाँ ?" उसने कदम उठाया परन्तु रुक गया है, "तुम जानो हमारे यहाँ मेहमान बैठे हैं भैया, तुम चलो।"

कामता बद्री के चले जाने के बाद छिद्दू की ओर देखकर बोला— बेटा-साले; महुआ पियो, महुआ ! रईस बनते हैं और महुआ पीते हैं। कहो छिद्दू काका ? हम तो संतरा पीने वाले हैं। कभी संतरे से कम पर हाथ रखा हो तो कह दो ! हां, हां कह दो !

छिद्दू ने सिर हिलाते हुये समझौते के स्वर में बीचबचाव करने के लिये कहा—"तो भैया कामता ऐसा करो, पिछला तो तुम जैसे भी हो चुकता कर दो, तब तो बाबू भी कुछ खयाल करें।"

कामता उत्साहित हुआ—"छिद्दू-काका, तो हम कब इनकार कर रहे हैं? तुम जानो, बस बोतल लेकर मेहमानों को थमा आयें और तुम्हारा नामा लिए आते है। बस तुम जानो, सर्राफे तक जाने की देर है काका! तुम उधार नही मानते तो ऐसे ही सही। हम उधार थोड़े माग रहे है।"

राधेमोहन पुस्तक से आँख उठाकर बोल पड़ा—"तो तुम्हारा कौन दम निकला जा रहा है? जाओ ले आओ नामां! कौन जवाहरात रखे है तुम्हारे घर पर कि सर्राफे से थैली ले आओगे?"

कामता ने चुटिया कर चेतावनी मे तर्जनी उठाली—"ऐसी बात न कहो बाबू! दस बरस से तुम्हारो दुकान न भर रहे होते तो जवाहर भी हो जाते। हाँ, अपने तो इस चीज के आगे जवाहर को मिट्टी समझते है।" वह छिद्दू की ओर घूम गया, "कहो छिद्दू-काका, जवाहर न सही अपनी इज्जत तो रखते है।" वह फिर राधेमोहन की ओर घूमा, ऐसी बेइतबारी न करो मालिक।"

छिद्दू ने अपने स्वर को जरा कोमल किया—"क्या बेचने जा रहे हो सर्राफे मे?"

कामता ने अपने कोट के भीतर की जेब मे हाथ डालते हुए कहा—"अरे, तो सर्राफे में क्या जायें, तुम्ही न रख लो? तुम्ही को देकर छुड़ा लेंगे। सूद दूसरे के घर क्यों जाये। अपने मालिक के घर पर ही रहे। उसने जेब से निकाल कर रुपयों की माला दिखाई, "यह लो, मालिक तुम्हीं रख लो।"

छिद्दू ने कौतूहल से माला हाथ मे ले ली—"देखे, देखें!"

कामता ने अभिमान से कहा—"देखते हो रानी की असली चाँदी है। आज दिन तो दूने मे जा रही है। और नही तो क्या? यह पुराना रुपया मिलता कहाँ है अब?"

छिद्दू ने माला को हाथ में तौलते हुये पूछा—"कित्ते की होगी?"

कामता ने अभिमान से गरदन ऊँची कर और हाथ बढ़ाकर कहा—"अरे कम मे कम होगी तो तीस-पैंतीस रुपयै की होगी।" उसने माला छिद्दू के हाथ से लेकर राधेमोहन की ओर बढ़ा दी, "लो मालिक, पिछले नौ

और आज के पाँच दे जायं तो लौटा देना।"

राधेमोहन ने इन्कार से हाथ झटक दिया—ना, ना, यह बला हमारे सिर मत डालो। यह साहूकारा हमारे बस का नहीं। इसके तीस-पैंतीस तुम्हें जहाँ मिलते हों ले आओ। हमारा नामा चुका कर अपनी चीज ले जाओ।"

कामता ने अनुरोध और आग्रह में गरदन टेढ़ी करके कहा—"अब ऐसी बातें न करो मालिक! तुम्हारी जवानी की कसम बाबू, घर में मेहमान बैठे हैं। इज्जत का सवाल है। हमें सर्राफे तक क्यों दौड़ाओगे? कहीं मेहमान समझ बैठें कि मुआ बैठाल कर भाग निकला।" उसने छिद्दू की ओर घूम कर देखा, "और क्या काका, बनी बनाई इज्जत चली जाय। अरे हाँ, इज्जत और धरम बिगड़ते लगता क्या है?"

राधेमोहन ने उलझन प्रकट की—"अरे कह दिया, इसे तौलना, दाम आंकना हमारे बस का नहीं। जो लोग यह काम करते हैं, उन्हीं के यहां ले जाओ। वही देंगे तीस-पैंतीस इसके तुम्हें।"

कामता विनय और आग्रह मे जंगले पर झुक गया—"मालिक, तुमसे तीस-पैंतीस कौन मांग रहा है? हमारा इस बखत काका, काम निकल जाय। फिर अपनी चीज अपने घर ले जायेंगे। कोई बेचने की चीज थोड़े ही है। तुम जानो, इस जमाने में ऐसी चीज कहीं मिल सकती है?"

राधेमोहन ने इन्कार में हाथ हिला दिया—"ना, ना भैया यह साहूकारा हमारे बस का नहीं।"

कामता ने सहायता के लिए छिद्दू की ओर देख शिकायत के स्वर में कहा—"अब देखो छिद्दू काका, मालिक की बातें!"

छिद्दू ने सिफारिश की—"छोटे बाबू, अब बात रख लो कामता की।"

राधेमोहन ने छिद्दू की ओर देखकर असंतोष प्रकट किया—"काका, तुम भी मुसीबत गले मढ़ देते हो।" उसने विवशता से माला हाथ में ले ली और पूछा, "तो कब छुड़ाओगे इसे?"

कामता उत्साहित हो गया—"अरे बस इसी तनखा पर मालिक!" उसने हाथ से निश्चिंत रहने का संकेत किया, "होली के बाद, महीना बन्द होते ही जो तनखा मिली तो पहले मालिक तुम्हें सलामी देकर तब घर जायेंगे।"

राधेमोहन ने माला डेस्क में रखकर फिर पुस्तक उठा ली।

छिद्दू जंगले के भीतर जा अलमारी में से नारंगी रंग की एक बोतल निकालते हुए कामता को समझाता रहा--"कामता भैया, देखो, हम झूठे न पड़ें हां। तुम बड़े मालिक के बखत के गाहक हो। तुम्हें इनकार भी नहीं करते बनता।" उसने बोतल कामता को थमा दी।

कामता की आँखें प्रसन्नता से चमक उठीं, स्वर गद्‌गद् हो गया—"बड़े होसियार हो काका। कैसे याद रखते हो गाहक को कि हम सन्तरा पीते हैं!" प्रतिज्ञा की घोषणा में बांह उठा कर बोला, "संतरे से नीचे हमने कभी पी ही नहीं, क्यों काका? आदमी पहनने-ओढ़ने में कसर कर ले पर सराब बढ़िया पीये।" उसने फिर बांह ऊंची उठा ली, "हमने कभी संतरे से कम छुई हो तो कोई कह दे? हाँ काका, कसम गंगाजी की।"

कामता ने बोतल कोट के भीतर बगल में छिपा ली और उत्साह से दुकान से उतर कर बायीं ओर को चला गया।

राधेमोहन पुस्तक पढ़ने में तन्मय हो गया।

छिद्दू ने राधेमोहन की ओर आकर रहस्य के स्वर में कहा--"मालिक, माला चालीस से कम की नही होगी इस जमाने में।"

राधेमोहन ने पुस्तक से आँखें हटाये बिना उत्तर दे दिया--"तो अपने को इससे क्या?"

छिद्दू एक कदम और राधेमोहन की ओर बढ़ा और हाथ उठाकर समझाया "इससे क्या?....वाह, अब वह छुड़ा थोड़े ही सकता है इसे!"

राधेमोहन ने पुस्तक से नजर उठाकर पूछा--"तो फिर तुमने हमसे रख लेने को कहा क्यों?"

छिद्दू ने परेशानी अनुभव की--"हैं, तुम तो छोटे बाबू कुछ नहीं समझते। नसा करने के लिये जो उधार लेगा, कभी उधार चुका पायेगा? यह तो ऐसा ही कीच है बाबू जो रपटा मो रपटता ही चला गया....।"

राधेमोहन ने झुंझलाकर, छिद्दू की ओर करवट ले ली--"हम कहते हैं, तुम जानते थे तो फिर हमसे रख लेने को कहा क्यों?"

छिद्दू ने हाथ उठाकर विस्मय प्रकट किया--"कैसी बातें करते हो बाबू! घर आती माया को नहीं रखोगे? बड़े मालिक ऐसा करते तो यह घर-जायदाद कैसे बनती? बड़े मालिक बड़े होसियार थे। बाबू,

इसी से तो ग्राहक पक्का होता है।" उसने रहस्य से रुपया खनकाने का संकेत किया, "और नामा दूना बढ़ता है, एक बिक्री का और फिर सूद का।"

राधेमोहन ने वितृष्णा प्रकट की--"हटो छिद्दू काका, यह सब ढग हमें अच्छे नहीं लगते। तभी तो लोग नाम धरते है ओर गालियाँ देते है।" उसने ध्यान पुस्तक की ओर कर लिया।

दुकान के दायीं ओर से कामता की बहू भीतर आगई। वह बहुत परेशान हाल थी। उसके शरीर पर मोटी, मैली सी धोती और फटी हुई कुर्ती थी। मैले-कुचैले अधनगे बच्चे को गोदी में उठाये थी। वह तीन-चार बच्चों की माँ जान पड़ रही थी। चेहरे पर भूख, निराशा और कठोर परिश्रम की रुखाई छायी हुई थी। दुकान में कदम रखते हुए उसने सिर का पल्ला माथे पर खींच लिया।

कामता की बहू ने रुखे स्वर में राधेमोहन को सम्बोधन किया—"यहाँ आया था?"

राधेमोहन ने पुस्तक से आँख उठाकर कामता की बहू की ओर देखा पर निश्चल मौन रह गया।

छिद्दू ने बहू को अनधिकार प्रवेश के लिये विस्मय और विरोध के स्वर मे डाँटा -"कौन आया?'

कामता की बहू का स्वर अधीरता में ऊंचा होगया--"चुन्नू का बप्पा नहीं आया?"

राधेमोहन ने पुस्तक बंद करके पूछा--"कौन? क्या नाम?'

स्त्री ने झमक कर कहा--"बड़े आये? " क्या नाम? मेहरारू कही मर्द का नाम लेती है?"

राधेमोहन ने निष्प्रभ हो गया--"क्यों?··· बात क्या है?··· किस लिये आया?"

कामता की बहू कमर से खिसकते बच्चे को ऊपर उचका कर बोली--"किस लिये आया? कैसे बन रहे हैं? मेरी माला चुरा लाया और क्या?"

कामता की बहू राधेमोहन को चुप देखकर ऊचे स्वर में दुहाई देने लगी-- "मुआ सूंघता फिर रहा था। कह रहा था, पंजाबी का देना है। माला गिरवी रखने को दे दे।"

छिद्दू ने विस्मय की मुद्रा में कामता की बहू को संबोधन किया—"तेरी माला चुरा लाया ?····कैसे चुरा लाया तेरी माला ? तूने ही दी होगी ।"

कामता की बहू विरोध में झुंझला उठी—"मैंने कब दी ? मैं क्या करूं ? कित्ती चीजें तो मैंने उतार-उतार कर दे दीं । मुआ जो पाता है, पी डालता है । पीकर धत्त हो जाता है तो हाड़-गोड़ से ऊपर तोड़ता है।" वह राधेमोहन की ओर घूम ~~गयी~~ "बाबू, मेरी माला दे दो । मैं नहीं जानती ।"

राधेमोहन ने बेपरवाही ही दिखाई—"हमें तेरी माला से क्या मतलब ? तुझे जो कहना है, जाकर अपने मर्द से कह !"

कामता की बहू ने राधेमोहन की ओर हाथ बढ़ाकर चुनौती दी—"वाह रे, मेरी माला तुम्हारे यहाँ है तो तुमसे कहूंगी" वह हाथ मटका कर और ऊंचे बोली, "उस मुए से क्या कहूँ ? दोनों बच्चे सुबह से भूखे हैं । मैंने माला निकाल कर रख दी थी कि यह मुआ जायगा तो बनिये के यहाँ रख कर आटा, चावल, तेल ले आऊंगी ।"

छिद्दू आगे बढ आया—"अरे तो तूने जहाँ माला रखी है वहाँ ढूढ़, अपने घर में जाकर देख ! यहाँ तेरा क्या धरा है ?"

कामता की बहू बहकावे न आने के दृढ़ निश्चय में तिनक कर बोली—"वाह रे, बड़े आये सिखाने वाले । वह घर से निकला तो मैंने अलगनी पर पिछौरी के नीचे माला के लिये हाथ डाला । माला वहाँ है ही नहीं । मैं पल भर को पिछवाड़े गई थी, इत्ते में नासपीटा ले भागा । जरूर यहीं दे गया है ।" वह खिसकते हुये बच्चे को कमर पर उचकाकर राधेमोहन की ओर घूम गई, "लौटाते हो कि नहीं मेरा गहना ?"

राधेमोहन कामता की बहू की तेजी से झेंप कर आंखें बचाने के लिये पुस्तक के पन्ने पलटते हुए बोला—"हम क्या जानें ?····हमारा उधार था । हमने तो अपना उधार पाया है ।" बेपरवाही दिखाने के लिये उसने तकिये का सहारा ले लिया, "तुम्हारा मर्द जाने, तुम जानो ।"

कामता की बहू ने गोद से खिसकते हुये बच्चे को संभालते हुए स्वर बहुत ऊंचा करके पुकारा—"कैसी बातें करते हो बाबू ?" उसने राधेमोहन के मुंह की तरफ हाथ फैलाकर पूछा, "तुम इत्ता भी नहीं जानोगे कि गहना औरत की चीज है ? बड़े मुंशी-इलमदार बनते हैं ।" उसने

अपना हाथ दुबारा राधेमोहन की ओर बढ़ाया, "बच्चे भूखे मरें और तुम हमारे गहने से मुये को सराब पिलाओ ! ...देओ हमारा गहना निकाल कर !"

छिद्दू ने मालिक की ओर से बोलना आवश्यक समझा । कामता की बहू की ओर कदम बढ़ाकर, हाथ उठाकर समझाने के लिये बोला—"अरे.."

राधेमोहन ने छिद्दू को टोक कर स्त्री से आँखें चुराते हुये कह दिया—"तुम्हें जो कहना है, अपने मर्द से कहो जाकर । हम कुछ नहीं जानते ।"

छिद्दू ने समर्थन किया—हाँ, ठीक तो है ।" और कामता की बहू को धमकाने के लिये हाथ से परे हटने का इशारा करते हुये कहा, "हटो यहाँ से ! तुम्हारा मर्द-औरत का झगड़ा है । हम लोग क्या जानें ? हमने माँग कर कोई खैरात तो ले नहीं ली है । महीना दिन राह देखी है उधार के लिये, तब आकर दे गया है ।"

कामता की बहू ने बाँह फैलाकर ऊंचे स्वर में दुहाई दी—"हाय राम, कैसी बातें करते हो बाबू । तुम नहीं जानते गहना औरत की चीज होती है ? कोई किसी का माल चुरा कर तुम्हारे यहाँ दे जायगा तो तुम दबा लोगे ?"

राधेमोहन के दो परिचित नन्दलाल बाबू और जीवन दुकान के सामने से जा रहे थे । एक औरत की पुकार सुन कर ठिठक गये और फिर भीतर आगये ।

नन्दलाल खद्दर का कुर्त्ता-पायजामा पहने, सिर पर मशीन से हजामत बनवाये साधुवृत्ति व्यक्ति था । नाक पर ढलका हुआ चश्मा और हाथ में मोटी छड़ी थी । जीवन खद्दर की कमीज-पतलून पहने आधुनिक काँग्रेसी था ।

नन्दलाल ने विस्मय से पूछा—"क्या हुआ राधे भाई'?'

जीवन ने भी पूछा—"क्या झगड़ा है ?"

राधेमोहन परिचितों को देखकर उत्तेजना में तख्त पर खड़ा हो गया और कामता की बहू की ओर संकेत कर बोला—"देखिये तो बाबू जी, यह हमें चोरी लगा रही है ।" वह कामता की बहू की ओर घूम गया, "हम तुम्हारे घर गये थे तुम्हारा गहना उठाने ? तुम्हारा आदमी कर्जे में अपने घर की चीज दे गया है ।... तुम्हारा औरत-मर्द का झगड़ा है ।" उसने समर्थन की आशा में आगुन्तकों की ओर देखा, "तुम अपने मर्द से निपटो !"

कामता की बहू की आंखों से आंसू बह आये थे। उनकी परवाह न कर गोद के बच्चे को संभालती हुई, बहुत तीखे स्वर में दुहाई देने लगी — कैसी बातें करते हो बाबू ? बच्चे भूख से बिलख रहे हैं। उनके मुँह में दाना नहीं गया। बच्चों का पेट भरने के लिये हमने गहना निकाला तो उससे तुम उस मुए को सराब पिलाओगे ? तुम्हें शरम नहीं आती।"

छिद्दू ने स्त्री को बहुत जोर से धमकाया—"निकल यहाँ से' उसने सड़क की ओर संकेत कर दिया, "तू अपना गहना अपने मर्द से मांग। तुझे हम लोगों से क्या मतलब ? मर्द के मुंह लगती है देखो तो इसे।"

राधेमोहन ने प्रश्न की मुद्रा में हाथ उठाया—"हमने तेरे मर्द से गहना मांगा था जाकर ?"

कामता की बहू दबी नहीं, कड़क कर बोली—"माँगने नही गये तो और क्या ? सराब के उधार में तुमने हमारा गहना लिया क्यों ?" उसने दुहाई देने के लिए हाथ फैलाये आगुन्तकों की ओर देखा, 'क्या गाज पड़ गई जमाने पर ! दूसरों का घर फूंक कर" संकेत से उसने राधेमोहन को दिखाया, "कमाई कर रहे हैं। सरम नहीं आती। बड़े कर्जा लेने वाले बने हैं। साहूकार बने है। यह काम है साहूकारों के ?"

छिद्दू स्त्री को डराने के लिए विस्मय से चिल्ला उठा—"देखो, देखो, देखो कैसी मुंहजोर औरत है !" उसने एक और कदम आगे बढ़ कर धमकाया, "तेरा मर्द अपना कर्जा नही देगा, बोल ?"

कामता की बहू धमकी से नहीं दबी। उपेक्षा में हाथ मटका कर बोली— "बड़े कर्जा लेने वाले आये। कर्जे में सराब पिलाकर दूसरों को बरबाद करते हैं। गरीब की सारी कमाई धरा कर जहर पिलाते हैं। सरम नहीं आती ?" उसने नारी के अंतिम अस्त्र का प्रयोग किया। वह धोती का पल्ला आँखों पर रख कर विलाप में चिल्ला उठी—"हाय रामजी इनका नास हो।"

नंदलाल उसे चुप कराने के लिये फर्श पर छड़ी खटखटाकर बोला—"अरे बताओ तो, बात क्या है ?··· कैसा गहना ?··· कैसा कर्जा ?"

राधेमोहन ने उत्तर दिया—"देखिये बाबूजी, इसका मर्द उधार ले गया था। उधार में घर की चीज दे गया तो इसमें हमने क्या जुल्म किया ? आप ही बताइये ?"

छिद्दू कामता की बहू को डराने के लिये उत्तेजना में बांह उठाकर बोला—"वह रुपया दे जाय, अपनी चीज ले जाय।" और वह कामता की बहू की ओर एक और कदम बढ़ गया, "तुम दे जाओ, तुम ले जाओ! तुम्हारे बच्चे भूखे है तो हम क्या करें? अपने घर की बात तुम मर्द-औरत जानो। यहाँ कर्जा ही तो लिया है.......... कुछ लूट नही लिया है।"

कामता की बहू भी फिसलते बच्चे को सम्भालकर एक कदम आगे बढ़ आयी—"लूट नहीं लिया तो और क्या? तुमने मुए को उधार सराब पिलाई तो उससे समझो! मेरा गहना है, में अपनी चीज क्यों दूं? घर में दाना नही, बनिये से उधार लेकर इत्ते दिन बच्चों को खिलाया। माला उतार कर रखी थी कि बनिये के यहाँ गिरों रख कर आटा चावल ले आऊंगी। कल त्यौहार का दिन है। सो मुआ चुरा कर ले भागा।"

छिद्दू ने सफाई दी—"चोरी की होगी तो तेरे मर्द ने। हम लोग तेरे घर थोड़े ही गये थे माला लाने! चोर होगा तेरा मर्द।"

कामता की बहू ने राधेमोहन की ओर हाथ से संकेत किया—"और यह बड़े भलेमानुस हैं। नसे के उधार में गहना लेकर चोरी सिखाते हैं। इन्हें नहीं दीखता था कि गहना बेचकर सराब ले रहा है तो घर में दाम नहीं होंगे और बच्चे भूखे बिलखेंगे!" वह फिर आकाश की ओर हाथ उठाकर विलाप करने लगी, "राम जी करे इनके बच्चे भूखे रहें तो देखें कैसे कर्जे में सराब पीते है। दूसरे के खून से होली खेल कर बड़ा दम दिखा रहे है, हाय राम जी इनका सत्यानास हो... !"

राधेमोहन ने लजाकर समझाया—"भई, तुम लोगों के बच्चे भूखे थे तो त्त.... त्त" वह लज्जा अनुभव कर थुथला गया है, "तुम लोगों को ख्याल करना चाहिये था अपने बच्चों का।"

कामता की बहू ने गोद के बच्चे को उतारकर धमाके से जंगले के भीतर तख्त पर पर खड़ा कर दिया और चीख उठी—"सराब के कर्जे में मेरा गहना रखते हो तो इन्हें भी तुम्हीं रखो! इन्हें तुम्हीं खिलाना!"

बच्चा चिल्लाकर रो पड़ा। कामता की बहू ने उसे डांटा—"रो, रो नास-पीटे इन्हीं लोगों को रो, जो दूसरों को सराब पिलाते है। दूसरों को

भी लाकर छोड़े जाती हूँ । जो इनके बाप की कमाई खाता है, वही इन्हें भी खिलाये ।"

कामता की बहू दुकान से चलने को हुई । राधेमोहन अपने डेस्क पर बच्चे को छोड दिये जाने और कामता की बहू के चिल्लाने से बहुत सकपका गया था ।

जीवन और नंदलाल बीच-बचाव करने के लिए एक साथ पुकार उठे—"अरे, अरे, देखो ! देखो !"

नंदलाल हाथ की छड़ी खटखटाते हुए बेंच से उठ कर खड़े हो गये और बच्चे को पुचकारने लगे—"च्पु, च्पु, चुप रहो !"

जीवन ने दो कदम आगे बढ़कर कामता की बहू को ठहरने के लिए संकेत किया—"ठहरो, ठहरो ! सुनो, सुनो !"

कामता की बहू ने पीछे घूमकर रोते हुए कहा—"क्या ठहरें ? इन्हें क्या खिलायें ? जो था सो तो सब उसने" राधेमोहन की ओर संकेत किया, "इन्होंने समेट लिया । ऊपर से बड़े भले बन रहे है !"

नंदलाल ने धैर्य रखने का संकेत कर समझाया—"सुनो तो ! सुनो तो !" वे राधेमोहन की ओर घूम गये, "अरे भाई राधे बाबू, तुम भी कुछ खयाल करो ...... !"

राधेमोहन ने परास्त होकर डेस्क का ढकना खोलते हुए कहा—"लो, ले जाओ । तुम उसकी घरवाली हो । तुम उसे नहीं समझाती उल्टे आकर हमारे सिर पर रार करती हो । शराब की दुकान है तो यहाँ क्या दूध बिकेगा, शराब ही बिकेगी । हमने सरकार को ठेके के दस हजार नहीं भरे है, लो !" उसने माला स्त्री की ओर बढ़ा दी, "हम दिये दे रहे है । पर तुम........"

छिद्दू ने बीच में होकर टोका—"लोग पियेंगे तो बिकेगी । नहीं दस हजार पूरे कहाँ से होंगे ।" उसने उंगली दिखा कर कामता की बहू को चेतावनी दी, "और तुम जानो कामता की बहू, तुम्हारे भरोसे तुम्हारी चीज लौटा रहे हैं । समझती हो ?"

राधेमोहन ने कहा—"हम यह थोड़े ही चाहते है कि तुम्हारे बच्चे भूखे रहें । तुम अपने मर्द को समझाओ ? हम थोड़े ही जाकर उसे पीने को कहते हैं !"

छिद्दू ने फिर चेतावनी में उंगली दिखाई—"हाँ, देखो कामता की बहू, तनखा मिलने पर हमारा उधार मिल जाना चाहिये। नहीं तुम जानो, हाँ.........!"

कामता की बहू ने माला हाथ में लेकर बच्चे को गोद में उठा लिया—"उधार लेने वाला जाने, उधार देने वाला जाने!" उसने बच्चे की ओर संकेत किया, "बच्चों का पेट भर लें एक बखत, यही बड़ी बात है। यहाँ इन का ही पेट नहीं भर पाते, रखा है सराब का उधार देने को।" वह ठेंगा दिखाती हुई चल दी, "तुम्हारा उधार हमारे ठेंगे से!"

राधेमोहन ने स्त्री की ओर संकेत कर नंदलाल और जीवन से कहा—"अब देख लीजिये बाबू जी, हां, देख लो जीवन भैया, यह है भलमनसाहत का नतीजा। इसके बाल-बच्चों का खयाल करो तो कर्ज के नाम यह ठेंगा दिखाती है।"

नंदलाल बेंच पर बैठ गये और छड़ी फर्श पर टकोरते हुए बोले—"ठेंगा तो राधे भैया तुम ही उसे दिखाते रहे, उसके मर्द को नशे में पागल बनाकर, उसकी सारी कमाई ऐंठ कर उसके बच्चे भूखे बिलखते रहे। तुम्हारी बोतल ले जाकर उनके हाथ क्या आया?" उन्होंने हाथ फैलाकर पूछा, "बताओ, ठेंगा दिखाना तो यही था भैया।" नंदलाल ने स्वर कोमल कर लिया, "राधेमोहन, यह क्या लानत का काम तुमने गले बाँध रखा है? आदमी चाहे आधे पेट खाकर रह जाय, ऐसी जलालत का काम न करे!" उन्होंने घृणा प्रकट करने के लिये मुंह बिचका लिया, "ऊंहूँ, छी, छी!"

राधेमोहन ने उत्तेजित स्वर में सफाई देने के लिये कहा—"बाबू जी, आप भी कैसी बातें कर रहे हैं? जैसे जानते नहीं कि कैसी मजबूरी में इस दुकान पर बैठता हूँ। आपसे क्या छिपा है? चाचा के बाद भैया ही इस दुकान पर बैठते थे। लड़ाई के जमाने में भैया ने सौ दफा कहा कि मैं इस दुकान पर बैठूं तो वे सप्लाई का ठेका लेकर लाखों के वारे-नियारे कर दिखायें। कुनबा भर मेरे पीछे पड़ा रहा कि घर का काम छोड़कर पराई नौकरी करता हूँ। मैं साठ रूपल्ली लेता रहा पर इस दुकान पर नहीं बैठा। आप क्या नहीं जानते?"

नंदलाल हाथ उठा कर बोले—"भैया, अब तो बैठते हो? जैसा बुरा तब था, वैसा बुरा अब है।"

राधेमोहन ने विवशता प्रकट की--"बाबू जी, किस्मत का कोई क्या करे ? भाग्य में ही लिखा था। भैया चल बसे" उसने आंखें पोंछ ली, "और बैठना ही पड़ा पर मेरा ही दिल जानता है कि कैसी जलालत लगती है। ऐसा लगता है, जैसे अपनी इज्जत बेच रहा हूँ और दूसरे का घर घाल रहा हूँ पर क्या करूँ ? बुजुर्गों ने घर का रोजगार ही ऐसा बना दिया है !"

जीवन शांति से बोला—"राधे भैया, तुम चाहे जो कहो, मेरे तो चाहे बाल-बच्चे भूखों मर जायें, इस औरत की हालत देख कर मैं तो ऐसी दुकान पर कभी न बैठूं। चाहे मंडी में बोझा ढोकर बाल-बच्चों का पेट पाल लूं। राधे भैया, तुम्हारा दिल जाने कैसा है जो यह सब सह लेते हो ? तुम्हीं बताओ, तुम्हारे इस रोजगार की वजह से कितने घर बरबाद होते होंगे ?"

नंदलाल ध्यान आकर्षित करने के लिये फर्श पर छड़ी टकोरकर समझाने लगे—"घर रोजगार की तुमने अच्छी कही ? भैया, कोई गाँठ कतरने को ही अपना रोजगार समझ ले तो ?" उसने प्रश्न की मुद्रा में आंखें फैला दीं, "अरे कुछ लोग उसे भी रोजागार कहते हैं। अच्छी पट्टी पढ़ा रहे थे तुम उस औरत को कि तुम उसके घर से उसका गहना नहीं उठा लाये। उठा नही लाये तो और किया क्या ? वेश्या क्या लोगों को उनके घर से बुलाने जाती हैं ?"

राधेमोहन ने विरोध किया--"आप भी बाबू जी कहां की बात कहां ले गये। दुकान पर बैठता हूँ तो लोगों को पुकारता थोड़े ही हूँ कि आओ शराब पियो !"

जीवन ने तर्क की उत्तेजना में जंगले पर हाथ मारते हुए दूसरा हाथ उठा कर कहा--"क्या कह रहे हो, क्या कह रहे हो ? मकड़ी मक्खियों, भुनगों को फंसाने के लिए जाला बुनती है तो क्या उन्हें पुकारती भी है कि आओ फंसो ! आओ फंसो !·······यह क्या कहे जा रहे हो तुम ?"

नंदलाल जीवन की उग्रता के संतुलन के लिये शांति से समझाने लगे—"सुनो ·या, हाँ, एक तरह फंसाना ही तो हुआ। झूठे सुख का प्रलोभन देना फंसाना ही है ! राष्ट्रपिता गांधी जी कह गये है" उसने तर्जनी उठा कर स्वर ऊँचा करके कहा, "नशा देश का सब से बड़ा शत्रु है।"

नंदलाल ने बात पलटने के लिये स्वर भी बदला, "अच्छा, तुम यह बताओ, आदमी नशा पीता क्यों है ?"

जीवन ने टोक दिया—"कमबख्ती आती है तो पीता है और क्यों पीता है ?"

नदलाल बोले—"अरे भाई, यह तो हम और तुम समझते है ? पीने वाला तो अपने आपको कमबख्त नहीं समझता । वह क्या समझता है ?"

छिद्दू बोल उठा—"अरे मालिक, गम गलत कर लेते है लोग, दो पल हंस लेते हैं और क्या ? पुराना तरीका चला आया है । देवता, राछस सभी पीते रहे । कोई नयी बात थोड़े ही है कि आज ही पीने लगे हों ? ये तो मंसार की माया है । हां जादा न पिये । आप ही कहो ?"

जीवन ने राधेमोहन के सामने होकर प्रतारणा के स्वर में कहा—"वाह वाह, राधे बाबू ! तुम यहाँ लोगों को गम से निजात दिलाने के लिये बैठे हो ? खूब निजात दिला रहे हो !"

नन्दलाल उसे रोक कर बोले—"सुनो, आदमी नशा पीता है दो मतलब से । हम बताए, गम की बात हो तो उसे भुलाने के लिए, अपने आपको धोखा देने के लिए । बेसुध हो जाने से ग़म की वजह तो दूर नही हो जाती ?" उन्होने दूसरी उंगली उठाई, "और दूसरी बात, सुख का माधन पाये बिना अपने आपको सुखी समझने के लिए.... "

जीवन बीच में बोल उठा—"हाँ,-हाँ, तो यह कौन बड़ी अक्ल की बात है । हर तरह से अपने आपको धोका देना है । उसने राधेमोहन से कड़े स्वर मे पूछा, "और राधे बाबू, तुम लोगों की खून-पसीने की कमाई समेट कर उन्हें धोका बेचते हो, धोका देते हो ।"

राधेमोहन इस लाँछना मे घबरा गया—"मैं धोका देता हूं ?...... मैं-मैं, मैं, कि-किसे धोका देता हूं ? मैं-मैं किसी को कुछ भी नहीं कहता ।"

नन्दलाल ने छड़ी फर्श पर टकोरते हुये राधेमोहन का हाथ थाम लिया—"राधे भैया, नशाखोरी धोका नहीं, पागलपन नहीं, यह बड़ी चालाकी है । बडा कमीनापन है । हम बतायें कैसे ? सुनो, ग़म और दुख दूसरों के लिये छोड़ कर खुद नशे में बेखबर हो जाना ।" उनका स्वर ऊंचा हो गया, "अभी देखा तुमने उस औरत के मर्द को ! घर भर का, जोरू-बच्चों का अन्न बोतल से पीकर खुद बेखबर हो रहा होगा ।"

जीवन ने समर्थन किया—"ठीक कह रहे हैं ! यह नशाखोरी की बेसुधी

बात कमीनापन है । वह वह बोतल पीकर धत्त बन गया होगा, घर भर का दुख भुला कर ज्ञानी बना बैंठा होगा । इस बात का मतलब है स्वार्थ, दूसरों को मूर्ख बनाना !"

नन्दलाल ने फिर छडी टकोर कर अपनी ओर ध्यान आकर्षित किया--"अरे यह है जेबकटी ! अपने हिस्से के दुख का बोझ दूसरों पर छोड़ कर खुद सुखी हो जाना, आनन्द मनाना । दूसरों का पेट भूख से पिचका कर उस पर बेहोशी में नाचना । अगर कोई आदमी दूसरों से ऐसा ही काम करवाना अपना धन्दा बना ले तो उसे तुम क्या कहोगे राधेमोहन भैया ?" नन्दलाल ने उत्तर के लिये राधेमोहन से आँखे मिलालीं ।

राधेमोहन आँखें चुराये, मुंह लटकाये उदास स्वर में बोला—"बाबूजी, आपकी कसम मै आज छोड़ दूँ इस दुकान को पर कोई दूसरा काम भी तो मिले । लड़ाई के बाद से, जब से छटनी में नौकरी छूटी है, जाने कितनी दरखास्तें दे चुका हूं । मुझे यहाँ बैंठते अपने मनको ही अच्छा नहीं लगता । कहीं कोई काम मिल जाये तो यहाँ छिद्‌दू ही बैंठ जायंगे, खुद नही बैठूंगा पर सब जगह नोवेकेन्सी !

जीवन उलाहने के स्वर में बोला—"क्या बातें करते हो भैया ? ऐसे भूखे नहीं मर रहे हो !" उसने छत की ओर संकेत किया, "इतना बडा तो यह मकान है । इसी का एक हिस्सा किराये पर दे दो । यह दूसरों को जानवर बनाकर रोज़ी चलाना, जेबकटी की रोज़ी भी कोई रोज़ी है ?"

जीवन फिर बोल उठा —"तुम मेरी सुनो, तुम तो शराब बेचकर अलग हो गये । पीने वाले आदमी की हालत का तो ख्याल करो ! इसी औरत के मर्द की बात सोचो ! बुरा न मानना भैया, सोचो तो अगर तुम्हारे घर की औरतों की यह हालत होती ‥ … "

जीने से बच्चे की पुकार सुनाई दी--"चाचा, अम्मा बुला रही है ।"

राधेमोहन पुकार की उपेक्षा कर चुप रह गया ।

नंदलाल छड़ी फर्श पर टकोरते हुए बोले--"राधे भैया सुनो, कोई खुद पीने वाला हो, इसे बुरा न मानता हो तो हम कहें कि एक बात है ।"

जीने से बच्चे की पुकार फिर सुनाई दी--"चाचा, अम्मा बुला रही हैं ।"

नन्दलाल राधेमोहन को पुकार की उपेक्षा करते देखकर कहते गये—"तुम पढ़े-लिखे सज्जन आदमी, अपने गले से तो एक घूट उतारने के लिये तैयार नही। खुद इसे बुरा मानो और दूसरों को पशुता बेचो तो तुम्हें अपनी आँखों ही यह कैसा लगता है ?"

जीने से फिर बच्चे की पुकार सुनाई दी—"चाचा ! अम्मा बुला रही है।"

राधेमोहन ने जीने की ओर घूम कर झुँझलाहट भरे ऊचे स्वर में कह दिया—"अरे भाई सुन लिया; कह दो आते है !" उसने छिद्दू को सम्बोधन किया, "छिद्दू-काका कह क्यो नही देते कि हम आ रहे है। यहाँ बैठे टुकर-टुकर ताक रहे हो, जवाब देते भी नही बनता। क्या सिर खा लिया।"

छिद्दू ने जीने की ओर बढ़कर ऊंचे स्वर मे कह दिया—"आते है, लल्ली, आते है। बाबू बात कर रहे हैं।"

जीने से फिर पुकार सुनाई की—"अम्मा कह रही हैं, खाना ठण्डा हो रहा है।"

राधेमोहन झल्ला उठा—"हो रहा है तो होने दो ! यह घर और दुकान एक साथ होना भी मुसीबत है। घर में जाओ तो दुकान से पुकार पड़ती है, दुकान पर आओ तो घर से पुकार पड़ती है" उसने फिर छिद्दू काका की ओर देखा, काका कह क्यों नही देते, अभी ठहरे। दिया-बत्ती करके आयेंगे।" वह जीवन की ओर घूम गया, "जीवन दादा मै तो कभी से सोच रहा हूं, कोई इस पाप को समेटने वाला मिल जाता तो मै इससे हाथ धो लेता। मुझे कोई आधी रकम भी दे दे तो ठेका उसके नाम कर दू ।"

जीवन हंस पड़ा—"वाह, वाह यह खूब कहा तुमने। यह तो तुमने धर्मात्मा बनिये की बुद्धि दिखायी। भारी सूद पर रुपया कसाई को उधार दे कर गोहत्या के व्यापार से मुनाफा भी ले ले और स्वयं गोहत्या के अपराध से भी बचा रहे।"

राधेमोहन ने आत्मरक्षा में विरोध किया—"मुझे ही सब कुछ कह रहे हो, मेरी दुकान बन्द हो जायगी तो क्या सब ठेके बन्द हो जायंगे ? मै तो इसे बुरा मानता ही हू। अगर मेरी दुकान बन्द कर देने से शराब बन्द हो जाये तो मै आज छोड़ दू परन्तु" उसने नन्दलाल की ओर देखा, "बाबू जी, और सब ठेके तो रहेंगे ही .. "

नन्दलाल राधेमोहन की उत्तेजना के उत्तर में फर्श पर छड़ी जोर से खटखटा

कर बोले—"तो फिर तुम्हारा मतलब हुआ कि बहुत सी चोरियाँ रोज़ होती हैं, दस-पाँच आदमी और चोरी करने लगें तो क्या हर्ज है, क्यों ? उसका स्वर ऊंचा हो गया, "इतनी वेश्यायें कोठों पर बैठती हैं, दस-पचास और आ बैठें तो कुछ फरक नहीं पड़ेगा, क्यों ? पाप मे जितनी कमी हो उतना ही अच्छा है मेरे भाई ! मेरे भाई, जो पाप और दोष को बुरा नही मानता, उमसे हम क्या कहें ? परन्तु तुम्हारी तो आंखें खुली है । तुम इसे पाप मानते हो । तुम मे ही तो पाप को छोड़ने और रोकने का आशा की जा सकेगी ?"

जीवन ने आत्मीयता से अनुरोध के स्वर मे कहा—"राधे भाई, जब बात समझ में आ गई तो छोड़ो इस पाप को । आज ही छोड़ो इस पाप को । कितना विकट परिणाम तुमने नशाखोरी का इस स्त्री के दुर्भाग्य के रूप में देखा है । तुम दूसरों के लिए उदाहरण बनकर दिखा दो । भैया राधेमोहन, आज ही लिख डालो इस्तीफा ठेका मन्सूख कराई का ।"

नदलाल ने भी अत्यन्त अनुरोध के स्वर में कहा—"इसी होली मे जला डालो राधे भैया इस पाप को ! तुम लोगों को नशे की बरबादी से बचाओगे तो भगवान तुम्हारी आप सुनेंगे । उनकी महिमा अपार है भैया !"

जीवन फिर बोला—"और क्या ! और यह बला बरबाद भी तो गरीब को ही करती है !

नदलाल ने अपने आग्रह को सबल बनाये रखने के लिये छड़ी खटखटाकर कहा—"दूसरों के नाश का यह कारोबार भी कोई कारोबार है ? पैसा ही गलता हो तो एक बात है भैया ! इससे तो आदमी, आदमी ही नहीं रहता । कितने घर बरबाद हो गये इसमें ? कहो तो सौ-दो सौ मैं गिना दूं ? मुझे तो उंगलियों पर याद है !"

जीवन ने भी साथ दिया—"अरे दूर क्या जाओगे, इस कामता की ही बात सोचो; बच्चे भूख से बिलख रहे हैं औरत राहबराह भटक रही है । वह बेहया पीकर धत्त बना बैठा होगा । पीने वाला कमबख्त दूसरो को दुखी बना कर खुद सुखी बनने की बात सोचता है । इससे बड़ा स्वार्थ और पाप और क्या होगा ? चोरी क्या इससे बड़ा पाप है ?"

नदलाल ने अपने ढंग से कहा—"पाप-पुण्य की बात छोड़ो । हम तो कहते

हैं, जो अपने बाल-बच्चों की, घरबार की जिम्मेवारी न समझे और उनके पेट पर पाँव रखकर सुखी बनने की बात सोचे उस पर लानत है। वह हैवान है। और राधे भैया, बुरा न मानना, लानत है इस रोजगार पर जो लोगों को इस राह ले जाने का दरवाजा दिखाये।"

छिद्दू दुहाई के स्वर में दोनों हाथ उठाकर बोल उठा—"मालिक, आप लोग इलमदार बड़े आदमी हैं पर मालिक यह तो सदा से संसार की रीति चली आयी है।"

जीने से फिर बच्चे की पुकार सुनाई दी—"चाचा अम्मा बुला रही है!"

राधेमोहन ने झल्लाहट के स्वर में छिद्दू को सम्बोधन किया—"छिद्दू काका, तुम से सौ बार कह दिया कि ऊपर जाकर कह दो कि ठहर जायें, सो जाओगे नहीं; यहाँ बैठे टकर-टकर किये जाओगे।"

छिद्दू ने आतुरता से कहा—"अरे मालिक जा तो रहे हैं।" वह अनिच्छा से जीने की ओर बढ़ गया, "लो, यह चले जा रहे है।"

जीवन ने स्वर में भावुकता और अनुरोध भर कर कहा—"मान जाओ राधेमोहन! अभी इसी घड़ी इस पाप से इस्तीफा लिख डालो। समझ लेना, इस एक घर की बरबादी का प्रायश्चित्त हो गया। सोचो तो, दूसरों को बरबाद करके तुम कहाँ सुख पाओगे?"

राधेमोहन नन्दलाल और जीवन की बात सुनकर कुछ पल चुपचाप सिर झुकाये रहा। फिर दीर्घ निश्वास लेकर बोला—"अच्छा, ठीक है।" उसने झपाटे से डेस्क खोल लिया, "अच्छा, मैं कागज निकाल लूँ नहीं, पहले जरा रोशनी कर लूँ।" उसने इधर-उधर देखा, "छिद्दू माचिस जाने कहां रख जाते हैं?… अरे यह है तो। मिल गयी माचिस।"

राधेमोहन लैम्प जलाने लगा।

नन्दलाल कहता गया—"मनुष्य अपने ही स्वार्थ को देखे, समाज के कल्याण की चिन्ता न करे तो मनुष्य और पशु में अन्तर ही क्या?"

जीवन ने भी कहा—"जी हां, और क्या? ऐसे ही एक दूसरे के उदाहरण से सब लोग भलाई करना सीखते हैं। आज राधे भैया भला काम करेंगे, उन्हें देख कल चार और करेंगे। यही तो तरीका है।"

नन्दलाल बोले—"हां हां, सोचो! पहले कांग्रेस मे ही भाग लेते लोग कैसे

डरते थे ? फिर एक दूसरे को देखकर साहस करने लगे । अरे हमें वे दिन याद है ·······"

राधेमोहन लैम्प जला कर अंगोछे से हाथ पोंछकर बोला—"हां, मेरा कलम जाने कहां गया । अरे है तो सही ।" उसने प्रश्नात्मक दृष्टि से नंदलाल और जीवन की ओर देखा, "हां बोलिये न, क्या लिखूं ? कैसे लिखा जायगा ?"

जीवन ने जंगले पर कोहनी टिका दी । सिर खुजलाते हुये बोला—"इसमें क्या है, हम बताते है वैसे लिख डालो । लिखो, श्रीमान मंत्री महोदय··· "

नंदलाल ने छड़ी से टकोर की—"वाह, इस में मंत्री महोदय क्या करेंगे ? सीधे एक्साइज कमिश्नर को एड्रेस, आई मीन, सम्बोधन करो ।"

जीवन ने माना—"हां ठीक, ठीक कह रहे है बाबू जी । लिखो, मान्यवर एक्साइज कमिश्नर महोदय ! अर्ज यह है—न, न, न, लिखो, सेवा मे निवेदन है ····"

राधेमोहन लिखते-लिखते दोहराता गया—"सेवा··· मे···निवेदन·······है, आगे बोलो जीवन भाई ?"

जीवन सोच-सोचकर, श्रुत लेख लिखाने के ढंग से धीमे-धीमे बोलने लगा—"मै····अपने····अनुभव से····इस परिणाम··· पर पहुँचा हूँ····कि···· शराब का कारोबार ··· ·· नहीं नहीं, हां तुम लिखो मद्य-विक्रय का व्यवसाय····किसी भी नागरिक के लिये···"

राधेमोहन जीवन के अन्तिम शब्द दोहराते हुये लिखता गया—"मद्य विक्रय ···का व्यवसाय, किसी भी···नागरिक के लिये·······हां, आगे बोले भैया···· ·· !"

जीवन एकाग्रता के लिये माथे को पकड़ कर बोला—"देखो, क्या कहते हैं उसे ?·······याद नहीं आ रहा, हाँ; मद्य-विक्रय का व्यवसाय किसी भी नागरिक के लिये अपमानजनक है ।"

नंदलाल ने समर्थन किया—"ठीक तो है । अपमानजनक तो है ही ।"

जीवन ने जरा खांसकर कहा—"अब दूसरे पैरे में लिखो ! मैं यह अनुभव करता हूँ····कि शराब का नशा··· आदमी न··· न··· नहीं व्यक्ति को ·· सेल्फिश, नही भाई !" उसने माथा पकड़ कर सोचा, "क्या कहते है उसे ?"

नंदलाल ने छड़ी खटखटा कर सुझाया—"स्वार्थी, लिखो स्वार्थी !"

राधेमोहन लिखता गया—"व्यक्ति को·· स्वार्थी बनाकर हां ?"

जीवन फिर बोला—"हां, स्वार्थी बनाकर अपने परिवार और समाज के प्रति गैर जिम्मेवार····"

नंदलाल ने छड़ी खटकाकर टोक दिया—"यह क्या आधा तीतर–आधा बटेर। हिन्दी में लिख रहे हो तो सीधी हिन्दी लिखो। लिखो, परिवार और समाज के प्रति क्या कहते हैं, हां ·· अनुत्तरदायी बना देता है।"

राधेमोहन ने कागज पर सिर झुकाये दोहराया—"परिवार और समाज के प्रति ·· अनुत्तरदायी··· बना ·· देता है। हां, और ?"

जीवन जंगले का सहारा छोड़कर गम्भीर स्वर में बोला—"आगे लिखो, यह अनुभव····कर लेने····के बाद··· मैं··· इस दुकान को··· जारी रखने में असमर्थ हूँ।····इसलिए मैं··· इस पत्र··· द्वारा··· आपको········ सूचना····दे रहा हूँ····कि मैं····अपना ठेका··· छोड़ रहा हूँ········और कल से····अपनी दुकान नहीं खोलूंगा··· बस !"

नन्दलाल ने सुझाया—"आगे यह लिख सकते हो, अगर मेरी दुकान का सामान एजेन्सी वापिस ले ले········"

जीवन ने टोक दिया—"वाह, वाह, एजेन्सी क्यों ले लेगी ?··· कैसे ले लेगी ?"

एक व्यस्क लड़का दुकान में आकर उतावली से पुकार उठा— "बाबू, हमें एक बोतल महुआ दिला दो। चाचा मंगा रहे है।"

नन्दलाल, जीवन और राधे उसकी उपेक्षा कर त्यागपत्र लिखने-लिखाने में लगे रहे।

नन्दलाल ने छड़ी खटखटाकर सुझाव दिया—"अगर ले ले तो अच्छा ही है। नुकसान क्यों हो ?··· तुम्हारा क्या हर्ज है ? तुम लिख दो, अगर एजेन्सी वापिस लेले तो कृपा होगी वर्ना इसे सरकारी माल समझ कर नष्ट कर दिया जाये। मैं यह नुकसान बरदाश्त करने के लिए तैयार हूँ।"

राधेमोहन पल भर चुप रहकर बोला—"अच्छा, ·· लिख दिया।"

जीवन ने कहा—'बस दस्तखत कर दो इस पर। हाँ, एक काम करो, वही तो असली बात है। अपने इस त्यागपत्र की पाँच प्रतियाँ बना लो और

सभी पत्रों को एक-एक प्रति और अपने त्यागपत्र की सूचना भेज दो ताकि तुम्हारे त्याग का उदाहरण दूसरे ठेकेदारों के सामने आये, उन्हें कुछ शिक्षा मिले।''''समझे!''

दुकान में आया वयस्क लड़का अपनी ओर ध्यान देते न देख कर उतावली से फिर बोल उठा—''अरे बाबू, आप लोगों का लिखना-पढ़ना होता रहेगा, हमारे यहाँ लोग बैठे हुए हैं।'' वह उपेक्षा से खिन्न हो गया, ''अरे यहाँ तो कोई सुनता ही नही।''

राधेमोहन ने उसकी ओर ध्यान नही दिया।

लड़के ने इधर-उधर देख कर पूछा—''छिद्दू काका कहाँ है?'' और उसने जीने की ओर घूम जोर से पुकार लिया, ''छिद्दू-काका! ओ छिद्दू काका!''

राधेमोहन अधिकार के स्वर में बोल उठा–''छिद्दू काका क्या करेगे आकर? हम शराब नही बेचेंगे। बंद कर दिया हमने शराब बेचना।''

लड़के ने विस्मय से पूछा—''क्या कह रहे हो बाबू? बन्द कर दिया? अभी सात नहीं बजे। ठेका आठ बजे बन्द होता है!''

जीना उतरने की आहट आयी।

छिद्दू ने जीने से निकलकर पूछा—''कहो लाखन भैया, क्या है? क्यो पुकार रहे हो भैया?''

लड़का शिकायत के उत्तेजित स्वर में बोला—''यह देखो छिद्दू काका, क्या कह रहे हैं छोटे बाबू! देखो तो, उधार नही माँग रहे हैं। खरे नकद दाम दे रहे हैं। यह कह रहे है कि बन्द कर दिया। वाह, अभी दिन नहीं डूबा, ठेका आठ बजे बन्द होता है।''

राधेमोहन ने टोक दिया—''लाखन, तुम फिजूल बहस कर रहे हो। आठ और सात बजे का सवाल नहीं है। भैया, हम कह रहे हैं कि शराब का ठेका छोड़ दिया हमने। बचन कर लिया अब शराब नही बेचेंगे, समझे! ठेके से इस्तीफा लिख दिया। यह देख लो!'' उसने लिखा हुआ कागज लड़के के सामने कर दिया।

लाखन ने विस्मय और विरोध के स्वर मे पूछा—''छिद्दू-काका, ऐसा भी

सुना है कभी ? कहीं ऐसा भी होता है ? ठेके से भी इस्तीफा होता है क्या ?

छिद्दू बहुत घबराकर बोला—"यह क्या कह रहे हो छोटे बाबू ? कैसा इस्तीफा ?"

राधेमोहन छिद्दू काका की उपेक्षा कर दृढ़ता से बोला—"लाखन, तुमसे कह दिया, लेना हो तो और जगह जाओ !"

लाखन ने बेपरवाही प्रकट की—"अरे बाबू, बिगड़ क्यों रहे हो ? मुफत नही माँग रहे, उधार नहीं माँग रहे। खरे नकद दाम हाथ मे लिये हैं। तुम नहीं बेचते, न बेचो। दूसरे बीसियों पुकार कर देंगे।"

लाखन पाँव पटकता दुकान से चल दिया।

छिद्दू ने बहुत ही घबराहट और व्याकुलता से पुकारा—"अरे लाखन ! ऐ भैया, सुनो ! ठहरो तो......"

राधेमोहन ने बहुत कड़े स्वर में डाँट दिया—"छिद्दू काका, यह क्या बेमतलब झंझट कर रहे हो ?...हम कह रहे है हम शराब नहीं बेचेंगे ! हमने ठेके से इस्तीफा लिख दिया है। हमने कौल कर लिया है।"

छिद्दू प्रबल आघात से आँखें और मुंह बाये क्षण भर देखता रह गया और व्याकुल निराश स्वर में बोला—"बाबू, सराब नहीं बेचोगे ? तुमने इस्तैफ़ा लिख दिया ? यह कैसे हो सकता है बाबू, घर का रोजगार कोई ऐसे छोड़ सकता है बाबू ?" उसने आग्रह से कहा, "नही बाबू, होस करो ! ऐसा नहीं हो सकता बाबू !"

राधेमोहन ने दृढ़ता से कहा—"काका, हमने कह दिया अब यह पाप नही करेंगे। हमने कौल कर लिया।... बस हो गया आज !"

छिद्दू ने गिड़गिड़ाकर समझाया—"नही मालिक, तुम ऐसा नहीं कर सकते ! यह बड़े मालिक का बनाया कारोबार तुम नहीं बिगाड़ सकते। बड़ी मालकिन ऐसा नही होने देंगी। हमारे तन में जान है तो हम ऐसा नही होने देंगे। हमने इस घर का नमक खाया है बाबू, हम इस घर की बरबादी............"

राधेमोहन ने क्रोध में डाँट दिया—"बस हो गया छिद्दू-काका ! बको नही ! तुम ऊपर जाओ।"

छिद्दू अपमान से क्षण भर स्तब्ध रह गया उसकी आँखों में आँसू छलक आये। आर्द्र स्वर में बोला--"बाबू, हमने तुम्हें गोद खिलाया है, हमे ऐसे दुत्कारोगे ?"

राधेमोहन ने कड़े स्वर मे कह दिया--"खिलाया है, हम तुम्हें अपना बड़ा मानते है पर तुम्हारे कहने से भी पाप नहीं करेंगे। काका, तुम अभी ऊपर जाओ !"

छिद्दू के पाँव उठ नहीं पा रहे थे। वह आंखें पोंछते जीने से ऊपर चला गया।

जीवन ने प्रशंसा और उत्साह के स्वर में कहा--"वाह भाई राधे, मान गये भैया ! तुम्हारे जैसे आदमी ही दुनिया मे नाम कर जाते है, पुण्य कमा जाते है।"

राधेमोहन ने संकोच से कहा--"इसमें नाम और पुण्य क्या है भैया ? मै तो किसी तरह पाप मे अपनी जान बचा रहा हूं।"

नन्दलाल फर्श पर छड़ी टकोर कर बोला--"भैया, हम पाप-पुण्य की बात नही जानते। इतना जानते है कि नशे में अपने दुख का बोझ दूसरो के कंधे पर डाल कर खुद सुखी हो जाना बड़ा कमीनापन है। यह मनुष्यता से गिर जाना है। तुम दूसरों को इस पाप से बचाओगे. समाज का भला करोगे, समाज तुम्हें आशीर्वाद देगा। भगवान तुम्हारा कल्याण करेंगे।"

दुकान के बाहर से पुकार सुनाई देती है-- "अरे ओ राधे भैया ! देखो भैया ! देवकी जीजी आई है.... अरे बाहर तो निकलो !"

राधेमोहन ठीक से समझ नहीं पा रहा था। उसने ऊंचे स्वर में उत्तर दिया— "आते है, आते हैं भाई !"

राधेमोहन उतावली में तख्त से कूद कर दुकान से बाहर जा रहा था। उसके निकल सकने से पहले ही धोती पर चादर ओढ़े, माथे पर आंचल खींचे एक युवा स्त्री, शिथिल चाल से सड़क से दुकान में आ गई। स्त्री की बगल में छोटी सी गठरी थी। उसकी बायीं उँगली थामे एक ढाई-तीन बरस का लड़का साथ था और दाहिनी ओर चार-पांच बरस की लड़की थी।

राधेमोहन स्त्री को देखकर विस्मय और प्रसन्नता से पुकार उठा—"अरे जीजी, अभी आ रही हो ?" उसने छोटे लड़के को पुचकारा, "ओ हो ! रमेश बाबू, अब तो बड़े हो गये तुम ! पांव-पांव चलने लगे ? और तुम गिल्ली रानी ?" उसने लड़की को भी पुकार कर पुचकारा, "जीजी, खत डाल दिया होता । हम स्टेशन पर आ जाते । खबर क्यों नही दी ? क्या ऐसे ही चली आ रही हो ? सामान वामान कुछ······"

जीजी ने उदास स्वर में बताया—"भैया, टांगे पर है सब ।"

राधेमोहन ने पूछा—"टांगे पर है ? अच्छा अभी मंगाता हूँ ।" उसने पुकारा, "छिद्दू काका ! ओ छिद्दू काका ! नीचे आओ जरा भाई, देवकी जीजी आई हैं ।" वह जीजी की ओर घूमकर बोला, "अभी आया एक मिनिट मे, देखूं तो !" राधेमोहन सड़क पर देखने चला गया ।

राधेमोहन ने लौटकर पूछा—"जीजी, टागे पर सब तुम्हारा ही सामान है ?" इतना सब क्यों उठा लायीं ? तुम्हारे भाई के घर में क्या बिस्तर-भांडे की कमी थी ? जैसे अब तक चलता था, अब भी चल जाता ?"

जीजी आंचल में मुख छिपा कर रुँआसे स्वर मे बोली—"यह सब किसे दे आती ?··· ···कहाँ छोड़ आती ?"

राधेमोहन ने विस्मय से पूछा—"कि····किसे दे आती ? क····क्यों ?" कुछ सोचकर पूछा, "चन्दनलाल जीजा जी नहीं आये ? उन्हें क्या छुट्टी नही मिली ?"

जीजी ने आंसू पोंछते हुए रुँआसे स्वर में उत्तर दिया—"उन्हें क्या छुट्टी मिलेगी ? वे तो सदा की छुट्टी ले गये ?"

राधेमोहन विस्मय के आघात से थुथला गया—"क·· क क्या कह रही हो जीजी ?"

जीजी के आँसू और भी अधिक बह आये । हिचकी लेकर बोली—"ठीक ही तो कह रही हूं । मै तो उनके जीते जी बे आदमी की, निरासरे हो गयी ।"

राधेमोहन ने बहुत घबराकर पूछा—"क्या कह रही हो जीजी ? चन्दनलाल जीजा जी कहाँ है ?····आये क्यों नही ?"

जीजी ने माथे पर हाथ मार लिया—"वे क्या आते, उन्हें तो जहाँ जाना था, हमे लात मार कर चले गये ।"

राधेमोहन कुछ समझ नहीं पाया । उसने व्याकुलता मे पूछा—"चले गये ? क्या कह रही हो जीजी ?"

जीजी रुलाई को हिचकी से रोकते हुए बोली—"तुम क्या जानते नहीं कैसे थे वह ?"

राधेमोहन ने माना—"जानता क्यों नहीं। वैसे सीधे और भले आदमी दुनिया मे कम मिलेगे। कोई ऐब उन्हें छू नही गया था।"

जीजी ने रुलाई का घूंट भर कहा - "सीधे क्या थे ! अपने मन की ही तो करते थे। दूसरों से उन्हें क्या था ? नित भूरी कमली वाले बाबाजी के यहां समाधि लगाने जा बैठते थे।"

राधेमोहन का समाधान नही हुआ, बोला—"अरे तो इससे क्या ? यह तो धरम का ही काम है।"

जीजी कुछ उत्तेजित हो गईं—"धरम का ही तो काम है। घर का काम तो कभी नही किया। जब देखो, जोग-बसिष्ठ और गीता पढ़ रहे है। बच्चे बीमार पड़ जायें तो कह देते थे भगवान की लीला है। घर मे खर्च की तंगी हो तो कह देते थे, क्या लोभ मे फंसी हो; सन्तोष मे सबसे बड़ा सुख है। और वे बाबा जी उन्हें समझाते रहते थे, बच्चा यह ससार माया है। साथ कोई नही जायेगा। यह दुनिया भरम है। घर, बाल-बच्चे, सब भरम है। सुख है, संसार को भरम समझ लेने मे ! बरहम में लीन हो जाने मे।"

जीवन ने सहानुभूति से पूछा—"तो क्या सन्यासी हो गये ?"

जीजी ने स्वर सम्भाल कर आंखों पर आंचल रखे बताया - "जाने कितनी बार बाबा जी के साथ जाकर जोगी बनने के लिये तैयार हुए। मै पाव पकड़-पकड़ कर रोके रखती थी।"

राधेमोहन ने दीर्घ श्वास लेकर, खांस कर पूछा— "क्या कह रही हो जीजी, तो क्या सचमुच सन्यासी हो गये ?" अधीरता के कारण उसका गला रुक गया, 'पता है, कहाँ गये ? ·· ·· कब गये ?"

जीजी ने माथे पर हाथ मारा—"मै क्या जानू। मुझसे कुछ कह थोड़े ही गये। पिछले सुक्करवार की रात मे जाने कब उठ गये, साकल खोल कर निकल गये। सुबह दिखाई ही नही दिये। मै उनके पाव पकड़-पकड़ रोकती रहती थी कि अपने बाल-बच्चों की तरफ देखो, तो कह देते थे, तुम माया हो, हमें भरम मे फसाना चाहती हो ! हम सान्ती चाहते हैं।" जीजी ने हिचकी ली, "कपड़ा-लत्ता सब छोड़ गये। घर-बार, बाल-बच्चों में सबसे प्यारी रही, वही मरी मिरगछाला; बस

उसे ही लेते गये और यह चिट्ठी" आंचल की गांठ खोलने लगी, "लिखकर छोड़ गये।" जीजी ने पत्र राधे की ओर हाथ बढ़ाकर कहा, "लो भैया!"

राधेमोहन ने अस्थिर हाथ से चिट्ठी ले ली।

जीवन ने कहा—"पत्र को पढ़कर देखो राधे भैया!"

राधेमोहन आंखें डबडबा जाने के कारण चश्मा उतार कर कुरते के दामन से आंखें पोंछ रहा था।

नंदलाल ने छड़ी फर्श पर खटखटाते हुए जीवन से कहा—"तुम पढ दो न।"

जीजी ने गहरी सांस छोड़ी—"तुम्ही पढ़ दो भैया।"

जीवन पत्र लेकर लैम्प के समीप हो गया। रोशनी बढ़ाते हुए बोला—"जरा रोशनी तेजकर लें।" आंखें पत्र पर लगाये पल भर मौन रहकर बोला, "हूँ, इसमें लिखा है—मैं माया-भ्रम का··· बंधन तोड़ ·· कर···· सच्चे आनन्द ·· की खोज ·· में जा रहा हूँ। मैं ··· ·· ·· पर्वत पर··· निवास करूंगा। मेरे····पीछे दौड़ने ·· से कुछ नही होगा। मैंने ·· संसार ·· माया-मोह का····बन्धन तोड़ दिया है। यह संसार माया है। इस संसार की··· चिन्ता भ्रम है।··· ··· असली सुख···· माया के भ्रम को ······ पहचान कर······· ब्रह्म का सुख पाने मे है। यही······ परम शान्ति है। हम आनन्द को··· खोज में जा रहे है। तुम भी आनन्द ·· ··· प्राप्त करो!"

जीजी आंखों पर आंचल रखकर ऊंचे स्वर मे रो उठी—"हाय मै मर गई!" चार-पांच पल वह जोर से रोती रही। सब लोग स्तब्ध खड़े रहे। जीजी बोली, "हां भैया, वह तो आनन्द की खोज में चले गये। उन्हें तो सान्ति मिल गयी। आग लगे ऐसी सान्ति और आनन्द में। ऐसे जोग का ही आनन्द लेना था तो गिरस्थी काहे करी थी। हमारे रोने-धोने से उन्हें क्या? भाड़ में जाय ऐसा जोग-धरम जो दूसरे का कलपना न देखे! सात दिन तलक उनकी राह देखती रही। वह भला क्या लौटते?"

नदलाल ने ध्यान आकर्षित करने के लये फर्श पर छड़ी खटकाकर पूछा—"क्या कुछ इन्तजाम नहीं कर गये? क्यों राधे भैया, तुम्हें भी कुछ

खबर नहीं दी ? उनका ऐसा ही ख्याल था तो बाल-बच्चों का तो कुछ प्रबन्ध कर जाना चाहिये था ।"

जीजी आंखों पर आंचल रखे रोये जा रही थी । वैसे ही बोली—"उन्हें किसका ख्याल था ? उन्हें तो अपनी सान्ति और आनन्द का ख्याल था । सात दिन जब वे नहीं लौटे तो उनके दफ्तर के साहब से मिलने गयी । भैया, बड़ी सरम लगी पर जिसके सहारे सरम थी, वही चला गया तो सरम कैसे निभती ? साहब के सामने रोयी, झींकी, अँगूठा लगाकर तनखा ली······" जीजी जोर से रो पड़ी ।

नंदलाल ने संतोष प्रकट किया—"तनखा दे दी, यही बड़ी बात समझो । कोई बाल-बच्चेदार, भला आदमी रहा होगा बेचारा । संसार में भले आदमी भी हैं ही ।"

जीजी आसुओं का घूंट भर कर दीर्घ निश्वास ले, आंखों से आंचल हटाकर बोली—"हां भैया, उसने बाल-बच्चों के हाल पर रहम खाकर पूरे महीने की तनखाह दिलादी । दो महीने का किराया बाकी था, वह दिया । अब भरोसा किस का था जो और किराया चढ़ाती ?" उसने दोनों बच्चों की ओर सकेत किया, "इन्हें क्या खिलाती ?" उसने राधे की ओर हाथ बढ़ाकर कहा, "तुम्ही मेरे भाई हो और बाप के मर जाने के बाद बाप भी तुम्हीं हो, मां तुम्हारे द्वारे आ बैठी हूं । जिसने हमारे साथ ऐसी करी, राम जी उसे कभी सान्ती न मिले !" जीजी फिर ऊँचे स्वर में बिलख उठी ।

राधेमोहन शून्य की ओर देखता मौन खड़ा रहा । शेष सब लोग भी जीजी की अवस्था पर द्रवित हो चुप रहे ।

राधेमोहन आवेश दबा न सकने के कारण बोल उठा—"जीजा आनन्द की खोज मे चले गये ।" उसका स्वर ऊंचा हो गया, "चन्दनलाल जीजा आनन्द की खोज में चले गये । घरवाली को रुलाकर, बच्चों को बिलखता छोड़कर आनन्द की खोज मे चले गये ।" वह चिल्लाने लगा, "वे संसार की माया और परिवार के उत्तरदायित्व के भ्रम और दुख को छोड़कर आनन्द की खोज मे चले गये !" वह जीवन की ओर घूम गया, "क्यों जीवन भैया, यह क्या स्वार्थ और कमीनापन नहीं है ?"

जीवन ने भय और विस्मय की मुद्रा में हाथ उठा लिया—"राधे भाई, यह क्या कह रहे हो ! महात्माओं को ऐसा नहीं कहते ! महात्मा लोग ज्ञानी होते हैं, संसार से ऊपर होते हैं । अपने मन को शान्त करो !"

राधेमोहन उत्तेजित हो गया—"मैं अपने मन को शांत करूँ ?" वह महसा हंस उठा, "वैसे ही शांत हो जाऊं जैसे हमारे जीजा शान्ति पा गये ?" उसकी दृष्टि छत की ओर चली गयी, "हमारे जीजा ज्ञानी हो गये, तभी तो वे भ्रम और दुख की माया के बन्धन को छोड कर सुखी हो गये और बाल-बच्चों को बिलखने के लिए छोड़ गये ?" उसने चुनौती में जीवन की ओर देखा, "तुम उन्हें ज्ञानी और महात्मा कहोगे क्यों ?" वह नन्दलाल की ओर घूम गया, "बाबूजी, आप उन्हें ज्ञानी और महात्मा कहेंगे न ?" राधेमोहन बहुत उत्तेजित हो गया, "और कामता को गाली देंगे ? वह नशे में अपने बाल-बच्चों को भला कर आनंद मनायेगा तो उसे गाली देगे ? हमारे जीजा ने

में मिलाये दे रहे हो ! शराबी नशे में कर्तव्य से अन्धा होता है; त्यागी परलोक मुख होता है । तुम्हारी बुद्धि को क्या हो गया ?"

राधेमोहन की उत्तेजना और भी बढ़ गयी—"सन्यासी ज्ञान में परलोक को

देखता है । अरे मै क्या देखता हूं ? तुम क्या देखते हो ? तुम्हें मेरी बहन और उसके बच्चे बिलखते हुए दिखाई नहीं देते ? जिसे यह दिखाई नहीं देता, उसे क्या दिखाई देता है ? तुम्हें कामता के बीबी-बच्चे बरबाद होते दिखाई देते हैं; कामता को तो नहीं दिखाई देते । कामता नशे में अनुत्तरदायी बनता है । हमारे जीजा ज्ञान में क्या बनते है ? कामता दो-चार घण्टे के नशे के लिये बाल-बच्चों को ठोकर मारता है । परम ज्ञानी अपने बाल-बच्चों को सदा के लिये ठोकर मार गये ! बोलो, कौन नशा बड़ा है ?" उसने जीवन की ओर बढ़कर उत्तर मांगा, "मै पूछता हूं, कामता की इतनी हिम्मत है कि दूसरों के सामने अपने नशे का अभिमान करे ? कौन नशा बड़ा है ? बोलो····? जो चढ़ कर-कभी टूटता नही ?, और जिसकी प्रशंसा होती है ! ····कहो ?"

जीजी अपना कपाल ठोक कर फिर रो पड़ी—"वह सान्ती पा गये पर मुझ अभागिन को तो बेआसरे कर गये । बच्चों को तो बिलखता छोड़ गये । हाय राम जी, आग लगे उसके ज्ञान के नसे मे । आग लगे उनकी सान्ती के नसे में !"

राधेमोहन ने सीने पर हाथ मारकर कहा—"मै नशा बेचने के लिये लज्जित हूं । कामता नशा पीने के लिए शर्मिन्दा है परन्तु हमारे जीजा अपने ज्ञान के नशे का अभिमान करेंगे । अभिमान मे अपना नशा बांटते फिरेंगे और तुम" उसने तर्जनी से जीवन को चेतावनी दी, "माथा झुकाकर उनका आदर करना । उनकी सेवा करके पुण्य कमाना और मुझे गाली देना कि मै नशा बेच कर दुनिया को बरबाद करता हू ।" वह बहिन की ओर घूम गया, "जीजी, अच्छे समय आ गयी तुम । महात्मा लोग ज्ञान का नशा बेचे तो ठीक है । जो समाज उनका पालन करता है, उसी समाज को ठोकर मारें तो ठीक है । राधेमोहन को बोतल क निशा नही बेचना चाहिये । कहाँ है मेरा इस्तीफा ?" उसने झपटकर डेस्क पर से इस्तीफा उठा लिया और सिर से ऊपर उठा कर बोला, "बताओ, मेरी बोतल के नशे मे कितने आदमी घर छोड़ गये ? ज्ञान के नशे में घर-बार छोडने वालों की पल्टनें और अखाड़े इस देश मे भरे पड़े है !" उसने इस्तीफे को टकड़े-टुकडे कर फेंक दिया ।

जीवन ने सहानुभूति के स्वर में समझाया—"राधे भाई, तुम दुख और क्रोध में अंधे हो रहे हो।........"

राधेमोहन क्रोध और घृणा वश करने के लिये हंस पड़ा—"मैं दुःख और क्रोध में अंधा हो रहा हूं ?....खूब कहा जीवन भैया ! तुम अन्धे नही हो रहे" उसने जीवन को बाह से पकड़ कर झकझोर दिया, "तभी तो तुम्हें मेरे परिवार में लगी आग में ज्ञान की ज्योति दिखाई दे रही है ? .. हमारे जीजा भी अन्धे नही हो रहे जो अपने सुख की खोज में मेरी बहिन को सदा के लिये शान्ति दे गये ? ...... जिन्हें अपने आनन्द की खोज में बीबी-बच्चों का कलपना दिखाई नहीं दिया ?... ....जो समाज के पेड़ पर बैठ कर उसी की जड़ों पर ज्ञान की कुल्हाड़ी चला रहे है ? खूब कहा तुमने ! मै क्रोध में अंधा हो रहा हूं, तुम ज्ञान-शलाखा लगाकर सत्य देख रहे हो।"

जीजी फिर सिसक कर पुकार उठी—"हाय रामजी, जिसने मेरा घर बरबाद कर दिया उसे कभी सान्ती न मिले !"

राधेमोहन ने वितृष्णा और उपेक्षा से ललकारा—"जीवन भैया, नशे, नशे की बात है। दोनों नशे चलने दो दादा ! हमारे जीजा बड़े नशे मे दुखी ससार को ठोकर मारेंगे और ससार सिर झुकाकर उनका पालन करेगा। वे अपने नशे मे संसार को छोड़ने का गर्व करेंगे और हम बोतलो का छोटा नशा बेच कर उनके ससार का पालन करेंगे। हम दोनो नशे के व्यपारी है।" "वह अट्टाहास कर उठा—"किसे बुरा कहोगे दादा ? .. नशे, नशे की बात है !"

रूप की परख

एकांकी नाटक

अथवा

दृश्य कहानी

पात्र

पण्डित हरप्रसाद—प्राचीन परिपाटी के प्रौढ़ । कैलाश और सुमित्रा के पिता । बैंक के अकाउन्टेण्ट । लड़की के विवाह के लिये चिन्तित ।

मा—घर की मालकिन । कैलाश और सुमित्रा की मा । अशिक्षित, व्यवहार-कुशल प्रौढ़ा ।

कैलाश पंडित हरप्रसाद का पुत्र । नवयुवक । एम० ए० का विद्यार्थी । सामाजिक व्यवहार में क्रांति का समर्थक ।

सुमित्रा—पंडित हरप्रसाद की पुत्री । आयु बीस वर्ष । माता-पिता की अनिच्छा होने पर भी कालिज में पढ़ रही है । विचारों में भाई की समर्थक ।

[illegible] की छोटी बहिन । आयु चौदह वर्ष ।

सहेली—कैलाश की मा की पड़ोसिन सहेली ।

चेतन—कालिज में कैलाश से एक श्रेणी ऊपर पढ़ने वाला स्वावलम्बी विद्यार्थी । उसके विचारों का सहयोगी और मित्र ।

पण्डित रामनाथ—पंडित हरप्रसाद की लड़की के विवाह में सहायता के लिये तत्पर वर दिखाने वाले सज्जन ।

धर्मचन्द—पंडित रामनाथ जी द्वारा सुमित्रा के लिये प्रस्तावित वर ।

पण्डित ज्ञानचन्द—प्रस्तावित वर के भाई । इलाहाबाद अदालत में पेशकार ।

भाबी—भावी बहू को पसन्द करने के लिये आई हुई वर की भाबी ।

रूप की परख

(पर्दा उठता है)

दिन का चौथा पहर है। मकान मध्यम-श्रेणी की स्थिति के परिवार का जान पड़ता है। मकान के मुख्य कमरे में मेहमानों के स्वागत का प्रबंध है। सामने की दीवार में बनी अंगीठी की कानस पर रखी हुई टाइमपीस में अभी चार नहीं बजे हैं। कानस पर टाइमपीस के अतिरिक्त सजावट के लिए दो एक और भी चीजें है। अंगीठी के दाईं ओर कोने में लिखने-पढ़ने की एक साधारण मेज-कुर्सी है। मेज पर कुछ पुस्तकें और अखबार करीने से रखे है। अंगीठी के दोनों ओर दीवार मे कॉच की आलमारियाँ हैं। आलमारियों में पुस्तकें, दवाइयाँ और मिली-जुली चीजे हैं। कमरे की दाहिनी ओर दीवार में दरवाजा साथ के कमरे में खुलता है। बाईं दीवार के साथ एक औसत दर्जे का सोफा पड़ा है। अंगीठी के सामने दीवार के साथ तीन-चार कुर्सियाँ पडी है। कमरे के फर्श पर दरी है। कमरे के फर्नीचर और सामान से जान पड़ता है कि सामान किसी शैली या आयोजन मे एक साथ नही खरीदा गया है बल्कि घर में रहने वालों की आवश्यकतायें और शौक बढ़ने के साथ-साथ आता गया है। यही बात दीवारों पर लगे चित्रों से भी मालूम होती है। कुछ चित्र बहुत पुराने हिन्दू अवतारों और ऋषियो के काल्पनिक रूप हैं। उनसे नये चित्र बाल गंगाधर तिलक, गोखले और गांधीजी के है। इन चित्रों के नीचे सबसे नया आधुनिक ढंग के चौखटे मे मार्क्स का चित्र है। इस बड़े कमरे का मुख्य दरवाजा और दरवाजे के दोनों ओर की खिड़कियाँ बाहर बरामदे में खुलती है। यह बरामदा ही मकान की ड्योढी भी समझा जा सकता है।

मकान पंडित हरप्रसाद का है। वे एक स्थानीय बैंक में एकाउन्टेंट हैं। पण्डित जी का पुत्र कलाश एम० ए० में पढ़ रहा है। कैलाश की दो छोटी बहिनें है। सुमित्रा की आयु लगभग बीस वर्ष है और उर्मिला की चौदह वर्ष।

सुमित्रा जल्दो-जल्दी कदम रखती कमरे में आयी। वह दाँतों से ओंठ दवाये है। उसने बरामदे का दरवाजा उड़क दिया। वह साधारण किनारेदार सफेद धोती और ऊँची बाँह का जम्पर पहने है। उसका चेहरा गहरा गेहुंआ है परन्तु चेचक के गहरे दागों से भरा होने से साँवला लगता है। वह मेज के समीप पड़ी कुर्सी पर गिर सो पड़ी। बांहों को मेज पर गेंडुली की तरह बांध, चेहरा छिपाकर रुलाई को दबाने के लिये सिसकने लगी।

तीन चार सेकिंड बाद बरामदे से दो व्यक्तियों के बात करने की आवाज सुनाई दी। उड़का हुआ दरवाजा बरामदे की ओर से लगे धक्के से खुल गया। कैलाश हाथ में कालिज की कापी और पुस्तके लिये अपने साथी चेतन से साथ बात करता हुआ कमरे मे आ गया। वह चेहरे और वेश-भूषा मे कपड़ों की ओर अधिक ध्यान देने वाला नही लगता। वह खद्दर की कमीज और जीन की पतलून पहने है। कुछ लम्बे, रूखे बालों और सफाचट दाढ़ी-मूंछ से 'कामरेड' टाइप युवक जान पड़ता है। चेतन आयु में कैलाश से एक दो वर्ष अधिक है। वह कुर्ता-पायजामा पहने है। उसके कपड़े साफ है परन्तु ताजे नही है।

सुमित्रा चेहरा और कान बाहों मे दबाये सिसक रही थी इसलिये कैलाश और चेतन के कमरे में आने की आहट नही पा सकी। कैलाश और चेतन दोनो बहुत प्रसन्न थे परन्तु सुमित्रा को रोते देख कर दोनों ने परस्पर देखा। कैलाश चुपचाप दो कदम सुमित्रा की ओर गया। चेतन सुमित्रा को रोती देखकर संकोच मे दरवाजे के समीप जाकर बाहर नजर किये खड़ा रहा।

कैलाश ने पुकारा—"सुमित्रा !"

सुमित्रा पुकार सुनकर चौंक पड़ी और जल्दी-जल्दी आँचल से आँखे पोंछती हुई कमरे से चली जाने के लिये दाहिनी ओर के दरवाजे की ओर बढ़ गयी।

कैलाश ने विस्मय मे पुकारा - "सुनो, सुनो ! बात सुनो !··· क्या बात है ?"

सुमित्रा सिर झुकाये आँखें पोंछती ठिठक गयी।

कैलाश ने आग्रह मे पूछा—"बात क्या है सुमित्रा, व्हाट इज द मैटर ?"

सुमित्रा आँखे पोंछती निरुत्तर रह गयी।

कैलाश ने सुमित्रा की ओर एक कदम बढ़कर आग्रह किया—"बताओ न, क्या बात है ? ···माँ ने कुछ कहा है ?"

सुमित्रा आँखों से कपड़ा हटाये बिना रूआँसे स्वर में बोली—"जाने क्यों पीछे पड़ी हैं·······?" आँखों से आंचल हटते ही कमरे में चेतन को देख कर वह संकोच से चुप हो मुंह फेर कर दूसरे कमरे की ओर जाती हुयी कह गयी, "अभी आती हूँ।"

चेतन ने परिस्थिति देखकर कहा–"अच्छा, कैलाश मै चलता हूँ। फिर आऊंगा।"

कैलाश ने उसे टोका––"नहीं, नहीं !" हाथ की पुस्तकें मेज पर पटक सोफा की ओर संकेत किया और बेतकल्लुफी से बोला, "बैठो जी, ऐमी क्या बात है, सुमित्रा से बात करके जाना।"

चेतन हाथ में थमे कागजों को लपेटते हुए संकोच से बोला—"नहीं, इस समय वह परेशान है।······कोई हर्ज नहीं, मै फिर आ जाऊंगा।"

कैलाश ने आग्रह किया—"नहीं-नहीं, तुम बैठो अभी आती है।"

कैलाश ने चेतन का संकोच समझकर उपेक्षा दिखाने के लिये कहा–"परिवारों में ऐसे झगड़े तो चलते ही रहते हैं। तुमसे क्या तकल्लुफ ?"

चेतन को कुछ याद आ गया—"हाँ,··· सुमित्रा आज दाखिले के लिये कालिज में नहीं आयी ? अगर क्लास में जगह न रही तो फिर पिछले सेशन की तरह झगड़ा पड़ेगा।····याद है ?"

कैलाश ने एक कुर्सी खींच ली और सोफा के समीप बैठते हुए बोला––"मेरा खयाल है, माँ ने कुछ खड़पंच खड़ा किया होगा। कहा होगा, क्या करोगी आगे पढ़कर।····अभी पूछता हूँ।"

कैलाश ने दरवाजे की ओर झुककर पुकारा—"सुमित्रा !····आओ न। हां, सुनो, दो गिलास जल लेती आना !" वह चेतन की ओर घूम गया, "लेकिन दोस्त, इस बार मजा रहेगा। तुम्हारा यह काम खूब बना। सच कहता हूँ, मुझे उम्मीद नहीं थी। लेकिन भैया, तुम्हें अब संभल कर चलना होगा !"

चेतन मुस्करा दिया––"क्यों ?·······तुम क्या मुझे बेवकूफ समझते हो !"

कैलाश ने चेतन की ठोढ़ी छूने के संकेत से हाथ बढ़ाकर कहा––मुंशी जी, क्या समझते हो ? रिसर्च का स्कालरशिप मिला है। उसे निबाहना आसान काम नहीं। पालिटिक्स में ज्यादा पड़ोगे, प्रोफेसर बिगड़ गये तो टापते रह जाओगे, बाबूजी ! क्या समझते हो ?"

सुमित्रा दोनों हाथों में दो गिलास जल लिये आयी। वह मुंह धो आयी थी। उसके चेहरे पर मुस्कराहट थी परन्तु आँखों से रूलाई की लाली मिट नहीं गयी थी। उसने गिलास थामे ही चेतन की ओर देखकर सिर झुकाकर मुस्कान से स्वागत का संकेत कर दिया और पूछ लिया--"कहिये, चेतन भाई ?"

चेतन ने गर्दन झुकाकर उत्तर दिया--"सब ठीक है।"

कैलाश बोल पड़ा—"आज चेतन बड़ी खुशखबरी लाया है।"

सुमित्रा ने कौतुहल प्रकट किया—"क्या ?"

कैलास ने सिर हिलाकर कहा—"खुद ही बतायेगा।"

सुमित्रा ने आग्रह किया—"बताइये न चेतन भाई !"

कैलाश बोल उठा—"खुशखबरी सुनायेगा और मिठाई भी खिलायेगा।"

सुमित्रा ने कहा—"वाह ! खुशखबरी यह सुनायेगे तो मिठाई तुम खिलाओ ! खुशखबरी सुनाने वाले का मुंह मीठा किया जाता है। क्यों चेतन भाई ?"

चेतन ने मुस्कराकर कैलाश की ओर देखा—"हां, बात तो ठीक है।"

कैलाश ने सुमित्रा को स्नेह से धमकाया--"ओहो चौधरानी, कुछ मालूम भी है ? पहले बात तो समझ ले।" उसने चेतन से कहा, "देखो, यह सदा तुम्हारा पक्षपात करती है।"

चेतन ने आपत्ति की—"पक्षपात क्या है, उसकी बात ठीक है।"

सुमित्रा भाई से डरी नहीं बोली—"हाँ, करती हूँ जाओ !" उसने कैलाश को चिढ़ाने के लिए ठेंगा दिखा दिया, "जो लायक होता है, उस का पक्षपात किया ही जाता है। इन्होंने मुझे छः महीने में इम्तहान नहीं पास करा दिया ? एक तुम हो, कभी मेरी मदद नही की। बैठे नावेल पढते रहोगे लेकिन मुझे कभी एक लाइन नहीं बता सकते।"

कैलाश रहस्य उद्घाटन के लिये विवश हो बोला--"सुनी इसकी बात ?" उसने सुमित्रा को चेतावनी दी, तेरा क्या मतलब है, यह मिठाई न खिलाये ? अच्छा फिर न मांगना !"

सुमित्रा हंस पड़ी--"आखिर मिठाई खिलाने की बात क्या है ? बताइये न चेतन भाई !"

चेतन ने संकोच से कहा—"ऐसी बड़ी खुशखबरी तो क्या" वह जरा ठिठक गया, "मैं तो तुम्हें धन्यवाद देने आया हूँ।"

सुमित्रा ने विस्मय से त्योरी चढ़ा ली--"मुझे धन्यवाद ? किस बात का धन्यवाद ?"

कैलाश ने दोनों को चुप कराने के लिये हवा में हाथ मारकर कहा—"धन्यवाद होगा बाद में। पहले तुम मिठाई खिलाओ !"

सुमित्रा ने परेशानी दिखाई—"मिठाई, धन्यवाद ! पर कोई बतायेगा भी किस बात की मिठाई और किस बात का धन्यवाद ?" उसने ओंठ पर उँगली रखकर विस्मय से कहा, "क्या व्याह हो रहा है चेतन भाई का ?"

कैलाश ने विरक्ति से हाथ हिलाया--"धत्त !" और चेतन की ओर देख कर कहा, "देखा, लड़कियों की अकल कहाँ तक जा सकती है ? दुनिया में सबसे बड़ी बात है, ब्याह। तुम बताते क्यों नहीं, झेंप क्यों रहे हो ?"

चेतन ने मुस्कराकर कहा--"मुझे रिसर्च का स्कालरशिप मिल गया है।"

सुमित्रा की आँखें प्रसन्नता से चमक उठीं—"ओह, ग्रेंड ! ...... बहुत-बहुत बधाई परन्तु इसके लिये धन्यवाद मुझे क्यों ?........इंटेलीजेंट और मेहनती आप है। मुझे ही आपने इतनी अच्छी तरह पढ़ाया ? धन्यवाद तो मुझे आपको देना चाहिये ?"

कैलाश ने सुमित्रा को टोकने के लिये हाथ उठाकर कहा—"अजी हटाओ। मेहनत कोई करे, अपने को तो मिठाई मिलनी चाहिये।"

चेतन गम्भीर होकर बोला--"देखिये, असली बात तो यह है कि पिछले साल अगर आप लोगों ने मुझे अपनी ट्यूशन न दी होती तो मैं परेशानी में यूनिवर्सिटी छोड़कर गांव लौट गया होता। स्कालरशिप पा सकने का मौका ही न आता।"

सुमित्रा उसे चुप कराने के लिये बोली--"आप तो जरा सी बात का बतंगड़ बना रहे है। आखिर क्या किया हमने ? आपकी ट्यूशन न रखते तो किसी दूसरे की रखनी पड़ती।"

चेतन बोला--"तुम बात को मजाक में उड़ा देना चाहती हो।" उसने कैलाश से कहा, "एक बात तुम्हें भी नहीं मालूम बताऊं ?"

सुमित्रा ने आशंका से माथे पर बल डाल कर चेतावनी के स्वर मे कहा-- "क्या ?"

चेतन ने सुमित्रा की परवाह न की, बोला--"कैलाश, तुम जानते हो दरअसल इसे पढ़ाया तो मैंने बिलकुल नहीं। ट्यूशन तुम लोगों ने पढ़ने के लिये रखी भी नहीं थी। केवल मेरी मदद ही करना चाहते थे।"

कैलाश ने हाथ झटककर विरोध किया—"हटाओ जी, इन बेमतलब बातों को" और चेतन का धमकाया, "हूँ, बातें बनाकर मिठाई खिलाने से बचना चाहते हो ?"

चेतन के स्वर में भावुकता आ गयी—"मिठाई क्या, मैं तो जिन्दगी भर के लिये तुम लोगों का देनदार हूँ। एक बात तुम नहीं जानते, इसने" सुमित्रा की ओर संकेत करके बोला, "ऐसे आड़े समय मेरी मदद की है कि कह नहीं सकता।"

कैलाश भवें उठा कर बोला—"क्या बोरियत, क्या मदद कर दी ?"

सुमित्रा ने सकोच से टोका—"जाने भी दीजिये, यों ही बातें बनाते है।" वह चेतन को बोलते देखकर उसे अवसर न देने के लिये बोलती गयी, "मिठाई ! मिठाई···!"

चेतन सुमित्रा के विघ्न की परवाह न कर कैलाश की ओर देख कहता गया—"तुम लोगों से ट्यूशन में मिलने वाले रुपयों से मेरा किचन का ही खर्च चलता था।··· फीस मैंने कहाँ से दी ?"

सुमित्रा लज्जा और झुंझलाहट से बोली—"जाने भी दीजिये। मैं जाती हूँ··· " वह कमरे से जाने लगती है।

क़ैलाश ने सुमित्रा को टोक दिया—"क्यों, कहाँ जा रही हो ?" वह कुर्सी से उठ गया, "तुम यहाँ बैठो !" वह कोच पर बैठ गया।

सुमित्रा ने अनुरोध किया—"चेतन भाई, अब उन बातों को जाने दीजिये ! मिठाई खिलाइये आप !"

चेतन ने आग्रह से कहा—"नहीं, मैं वह बात कह कर अपना दिल हलका करना चाहता हूँ।"

कैलाश ने पूछा—"आखिर बात क्या है ? कौन बोझ पड़ा है तुम्हारे दिल पर ?" उसने सुमित्रा को प्रतीक्षा करने का संकेत किया, "कह लेने दे भई इसे ! इसके दिल का मामला है।"

चेतन बोला—"सुनो, फीस के लिये मेंरे पास रुपये नही थे। मैं बहुत उदास था। सुमित्रा ने मुझ से पूछा परेशान क्यों हो ? इसे परीक्षा की फीस का प्रबन्ध न हो सकने की बात बताई। जानते हो, इसने क्या कहा ? बोली, भैया से न कहियेगा······ "

सुमित्रा ने माथे पर बल डाल टोका—"तो अब क्यों कह रहे हैं आप ? आपने तो वायदा किया था कि नहीं कहेंगे !"

कैलाश बोल उठा—"समझ गया ! समझ गया मैं ! हटाओ भी तुम·······"

चेतन ने आग्रह किया—"सुनो तो, इसने कहा—भैया मेरे पास रुपये देखते हैं तो छीन लेते हैं·······"

कैलाश ने आँखें निकाल कर डाँटा—"अच्छा बच्चु, यह बात ? शिकायत करती हो ?"

सुमित्रा ने डांट की उपेक्षा से कहा—"तो क्या झूठी शिकायत है ?" वह मुस्करा दी, "अब क्यों डांटते हो ? उल्टा चोर कोतवाल को डांटे। चेतन भाई, जानते हो इन्हें ? राखी, भैयादूज को पिताजी से रुपये लेकर मुझे देंगे। फिर कहेंगे, बड़ी अच्छी बहन है, मुझे उधार दे दे। उधार वापिस कभी नहीं·······"

चेतन अपनी बात कहता गया—"हाँ, तो इसने कहा, आप मेरे सौ रुपये रख लीजिये। अभी मुझे ज़रूरत नहीं है। जब कभी जरूरत होगी ले लूंगी। समझ तो मैं गया फिर भी पूछा, इन रुपयों से अगर मैं अपनी फीस दे दूँ ? ट्यूशन में पूरे कर दूँगा तो मान गयी, यही तो मेरा मतलब है। इसने बताने को मना कर दिया था पर पीठ पीछे चुगली न खा कर सामने ही कह रहा हूँ। तुम्हीं बताओ, मुझे अगर स्कालरशिप मिला तो उसका श्रेय किसको है ?"

सुमित्रा ने लजाकर बात टालने के लिए कहा—"जी हाँ, मिठाई न खिलाने के लिये इतनी बातें बना रहे हैं। बस उन रुपयों ने ही तो आपकी जगह जा कर इम्तिहान दे दिया था न ?" वह चेतन के विरुद्ध कैलाश के पक्ष में हो गयी, "भैया, इनसे मिठाई खाकर छोड़ेंगे।"

कैलाश ने चेतन के कन्धे पर हाथ रख कर कहा—"अच्छा भाई, फिर खिला डालो मिठाई।····कब खिलाओगे ?"

सुमित्रा बोल उठी—"मैं बताऊं ?"

दोनों ने उसकी ओर देखा।

सुमित्रा ने सोचकर कहा—"पहला स्कालरशिप मिलने पर।"

कैलाश ने उंगली उठा कर स्वीकार किया—"ग्रैंड फीस्ट ?"

चेतन ने मान लिया—"रही पर हाँ" उसे कुछ याद आ गया, "मुझे तुम वह किताब तो लौटाओ·········प्रोफ़ेसर रत्नाकर की किताब, "ओरिजिन आफ फेमिनी·······"

दायीं ओर के दरवाज से आवाज आयी—"भैया·······भैया !"

कैलाश ने दरवाजे की ओर घूमकर पूछा—"क्या है ?"

कैलाश की छोटी बहिन उर्मिला आयी। उर्मिला का रंग बहिन से खुला हुआ और चेहरा हँसमुख था। वह हल्की रंगीन धोती पहने थी। सिर के केश भी संवारे हुए थे।

उर्मिला ने रहस्य भरी मुस्कान से कहा—"भैया, अम्मा तुम्हें बुला रही हैं।"

कैलाश ने जानना चाहा -"क्यों बुला रही हैं ?···क्या है ?"

उर्मिला मुस्कान दबा नहीं पा रही थी—"एक बात है।···बताऊं ?" वह मचल कर सुमित्रा की कुर्सी की पीठ पर झुक गयी, "तुम्हें बाजार जाना होगा।"

कैलाश ने विस्मय प्रकट किया—"बहुत बड़ा रहस्य बताया खैर, क्यों जाना होगा ? अभी तो मैं कालिज से लौटा हूं।"

उर्मिला सुमित्रा की कुर्सी की पीठ पर और झुक गयी—"हम नहीं जानते, अम्मा बतायेंगी।"

कैलाश ने चेतन से पूछा—"तुम कहीं जा रहे हो क्या ?"

चेतन ने सिर हिला दिया—"कहीं नहीं।"

कैलाश ने कहा—"तो फिर साथ ही चलेंगे। बातचीत करते चले-चलेंगे।"

सुमित्रा गम्भीर हो गयी थी। बोली—"अच्छा मैं जा रही हूं। वह खड़ी हो गयी।

कैलाश ने सुमित्रा के चेहरे पर आ गयी उदासी देख ली—"क्यों क्या है ?" उसने चेतन को सम्बोधन कर कहा, 'तुम किताब मेरे कमरे से ले लो, आलमारी मे है। '' मैं वहीं आता हूं।"

चेतन कमरे मे चला गया।

कैलाश ने उर्मिला से भी कहा—"तू चल, मै आता हू।"

उर्मिला चली गयी।

कैलाश ने सुमित्रा को सम्बोधन कर गम्भीरता से पूछा—"क्यों बात क्या है ?"

सुमित्रा की आंखें डबडबा आयीं। वह निरुत्तर रह गयी।

कैलाश ने चिन्ता से आग्रह किया—"बात क्या है, बताओ न ?"

सुमित्रा ने आँचल आँखों पर रख कर सिर झुका लिया।

कैलाश ने फिर पूछा—"तुम दाखिल होने के लिए कालिज क्यों नहीं आयीं ?···· और चेतन तुम्हारी प्रतीक्षा करते रहे। जगह नहीं रहेगी तो परेशान होगी।"

सुमित्रा आंसू भरे स्वर में बोली—"कैसे हो जाऊं दाखिल ?"

कैलाश ने भवें सिकोड़कर पूछा—"क्यों ? क्या मतलब ?"

सुमित्रा ने आंखें पोंछीं—"मां से पूछो।"

कैलाश झुंझलाहट से बोला—"क्या पूछूं माँ से ?··· सुबह सब बात तय हो गयी थी।"

सुमित्रा ने वैसे ही उत्तर दिया—"तुम्हारे सामने तो बात तय हो गयी थी। तुम गये तो मुझे रोक लिया।" उसका स्वर तीखा हो गया, "जाने क्यों मुझे गले का पत्थर समझ रही है। मैं तो कहती हूं, मुझे पढ़ाना नही चाहतीं, न पढ़ायें। मैं ऐसे ही किसी स्कूल में नौकरी कर लूंगी, नर्स बन जाऊंगी और कुछ नहीं तो महराजिन या महरी का काम करके अपना पेट पाल लूंगी। किसी से यह भी नही देखा जाता तो कह दो, कुछ खा के मर जाऊं पर वह अपनी बात पर अड़ी हैं।"

सुमित्रा ने स्वर भर जाने से आँचल से मुंह ढंक लिया।

कैलाश हुंकारा भर बात समझने के लिए क्षण भर फर्श की ओर देख कर बोला—"तो क्या कोई और प्रबन्ध हुआ है ?······ क्या कहीं और बात चली है ?"

सुमित्रा ने आँखें पोंछ कर कातरता से कहा—"मैं कोई बरतन-भांड़ा हूं जो गाहक मुझे पसन्द-नापसद करेगा ?" और फिर क्रोध में कुर्सी से उठ खडी हुई, "जैसे कोई हंड़िया को ठोक-बजा कर देखता है कि मजबूत है कि नहीं; अच्छी है कि नही। आखिर मैं इन्हें क्यों भारी हो रही हूं ? ये समझते है मुझे घर से निकाल देना ही जरूरी है।······"

दूसरे कमरे से मां की पुकार सुनाई दी—'कैलाश !····बेटा कैलाश !"

कैलाश की मां कमरे में आ गयीं। माँ प्रौढ़ आयु की गृहणी थीं। उस समय व्यस्त दिखाई दे रही थीं। सुमित्रा को आखें पोंछते देख कर विस्मय से ठोड़ी पर उँगली रख बोल उठी—"हाय राम, क्या हुआ ?"

सुमित्रा बिना उत्तर दिये कमरे से चली गयी।

कैलाश ने पूछा--"क्या है माँ ?"

मां आंचल की खूंट में बंधी गाँठ खोलती हुई बोली--"तेरी ही राह देख रही थी।" दस रुपये का तहाया हुआ नोट सीधा कर कैलाश को थमा दिया, "यह ले। तेरे पिता जी कह गये हैं, जल्दी से आ बाजार से कुछ फल, मीठा और नमकीन ले आ।"

कैलाश ने पूछा—"क्यों ?····क्या बात है ?"

मां ने बताया—"तेरे पिता जी एक बजे बैंक से आकर कह गये थे कि सांझ को मेहमान आ रहे हैं।"

कैलाश ने फिर पूछा—"कैसे मेहमान ?·· कौन आ रहा है ?"

मां ज़रा झिझकी—"कैसे होते है मेहमान ?····ज़रा देख कर चीजें लाना।" फिर कैलाश के समीप होकर रहस्य के स्वर में बताया—"पंडित रामनाथ ने एक लड़का बताया है। वे लोग सुमित्रा को देखने आ रहे हैं।"

कैलाश ने असंतोष प्रकट किया--"तुम लड़की के पीछे क्यों पड़ी हो ?"

मां का मुख कैलाश की ओर उठ गया, विस्मय में आंखें और ओंठ फैले रह गये--"क्या कह रहा है तू ? कौन पड़ा है पीछे ? उसे क्या कहा ?"

कैलाश बोला—"पीछे नहीं पड़ी तो क्या, जब वह नहीं चाहती तो तुम उसे शादी के लिये क्यों परेशान करती हो ?"

माँ ने बेटे की मूर्खता पर आश्चर्य मे आंखें फाड़ लीं—"क्या कह रहा है तू ?" मां ने उंगली गाल पर रख ली, "क्या लड़कियों का ब्याह नहीं होता ? बेटियों को कोई घर बिठाये रहता है ?"

कैलाश कुछ तीखा बोला—"बेटियां घर नहीं बिठा कर रखी जातीं तो जबरदस्ती किसी के गले मढ़ दोगी ? आखिर है तो तुम्हारी बेटी ! एक दफा तो तुम तमाशा कर चुकीं।"

मां के विस्मय की सीमा नहीं रही—"हाय मेरे राम ! क्या तमाशा कर चुकी मैं ? कैसी बातें करता है तू ?" वह अपने अधिकार की अनुभूति से जरा तन गयीं, "तुझे इन बातों मे क्या मतलब ? तू लड़का है। लड़कों की तरह बात किया कर। तेरा काम पढ़ना-लिखना है। तू पुरखा काहे को बनता है।"

कैलाश ने उत्तर दिया--"पुरखा बनने की इसमें क्या बात है ? पिछले बरस पिता जी एक बेवकूफ को लड़की दिखाने के लिये पकड लाये थे। उस

ने जाकर कह दिया, तुम्हारी बेटी उसे पसंद नहीं। उस बिचारी का रो-रो कर क्या हाल हुआ ? उसके चेहरे पर माता के दाग़ हैं तो इसमें उसका क्या कसूर ? तुम तो ऐसे कर रही हो जैसे कोई खोटा सिक्का दूसरे के हाथ थमा देने के लिये बेचैन हो।"

माँ को कोध आ गया—"बड़ी लम्बी जबान हो गयी है तेरी। अब यह कायदा ही चल गया है। लड़के लड़कियों को देखते हैं तो हम कैसे इन्कार कर दें ?" माँ ने जरा स्वर नीचा करके कहा, "इकीसवाँ लग गया है उसे। मेरी इस उम्र में तो तू गोद में था। जमाने को कोई क्या करे।" फिर रहस्य के स्वर मे समझाया, "बिचारे तेरे पिता जी की तो नींद हराम हो·······"

कैलाश ने विरोध में टोक दिया—"खामुखा नींद हराम हो रही है उनकी। जैसे मैं हूं, तुम उसे मेरा छोटा भाई ही समझ लो, बहन न समझो। अच्छी भली इंटर मे पास हुई है। उसे बी० ए० पढ़ने दो। जो देखने आयगा, माता के दाग ही देखेगा। लडकी के चेहरे मे उसकी कीमत लगाकर उसका अपमान क्यों कराती हो ?"

मा ने समझाया—"पागल हुआ है तू ! भला हो पडित रामनाथ का। बड़ी मेहनत से उन्हों ने अच्छा घर ढूढ़ा है। बड़े अच्छे सीधे-सादे लोग है। जमीन-जायदाद है। भगवान करे, यह सम्बन्ध बन जाय। लड़की अपना घर बसाये जाकर।"

कैलाश चुप नही हुआ—"वह यहाँ तुम्हें क्या दुख दे रही है ? उस ने तो कोई बेचैनी नही दिखाई। उसे पढ़-लिख लेने दो। वह तुम्हारे सिर का बोझ नहीं बनेगी। जब मौका होगा, ब्याह भी कर लेगी। तुम उसकी गठरी बांध कर किसी को दान कर देने का पुण्य कमाने की जिद्द क्यों कर रही हो ? लड़की देकर 'टका' न लिया 'पुण्य' ले लिया। अपना ही फायदा सोचती हो। उसके जी की बात तो नही।·····"

माँ ने कोध में डाँट दिया—"तू बहुत बढ़-बढ़ कर बातें न किया कर। लड़का है, लड़कों की तरह रहा कर। जब तेरी बहू आ जायगी, बाल-बच्चे होंगे, तू अपनी लड़कियों को कालिज में पढ़ा कर खुद ब्याह कर लेने के लिए कह देना। हम कुछ नहीं बोलेंगे। हाँ, देखो तो इसे ? बड़ा बनने लगा है। तुझे जो कहा है, जाकर कर !"

कैलाश ने फिर भी समझाने का यत्न किया—"देखो माँ, कहीं पिछली बार की तरह हुआ तो फिर क्या होगा ? तब वे लोग सुमित्रा को नापसन्द कर गये तो उस अपमान में यह छः महीने रोती रही । अगर फिर वैसा हुआ तो क्या होगा ?"

माँ हाथ दिखाकर झमक उठीं—"तुझे कई बार कहा है, तू बहुत चौधरी न बना कर । जब देखो लिच्चर देने लगता है । तेरे पिता भी कुछ समझते है, जो करना होगा करेंगे । तू जाकर बाजार से सामान ला ।"

दूसरे कमरे से आवाज सुनाई दी—"मितरां की माँ !··· मितरां की माँ !"

माँ ने दरवाजे की ओर मुंह कर उत्तर दिया—"बहिना मैं आई ।" और फिर कैलाश से बोली, "जा, तू जल्दी जा ।"

कैलाश के जा सकने से पहले ही माँ को पुकारने वाली स्त्री हाथ में एक पोटली लिये कमरे में आ गयी । उसे देख कर कैलाश चुप रह गया । कैलाश ने स्त्री को मौसी कहकर पायलागन किया ।

पड़ोसिन ने उसे 'जियो बेटा' कहकर आशीर्वाद दे दिया ।

कैलाश माँ के हाथ से नोट लेकर चला गया ।

पड़ोसिन ने मुंह मे भरा पान सम्भालते हुये पूछा "कब आ रहे है वे लोग ?"

माँ ने अनुमान प्रकट किया—"यही सूरज डूबते-डूबते, आयंगे और क्या । अभी तो कैलाश के पिता भी दफ्तर से नहीं लौटे । बस आते ही होंगे ।"

पड़ोसिन हाथ की पोटली दिखाकर बोली—"यह देखो, सब ले आई हूँ मैं ।"

माँ ने अनुरोध किया—"बहिना बैठो तो ।"

दोनों स्त्रियाँ पोटली को बीच में रख कर तख्त पर बैठने के ढंग से पांव समेटकर सोफा पर बैठ गयीं ।

माँ ने पोटली के प्रति उत्सुकता प्रकट की—"क्या लाई हो, देखूं !"

पड़ोसिन ने उत्तर दिया—"सभी कुछ ले आई हूँ बहिना" वह पोटली खोल कर एक-एक चीज दिखाने लगी, "यह करीम, यह पाउडर, ये गालो की लाली, ये होठों की सुर्खी ।" हाथ के संकेतों से आश्वासन देकर बोली, "बहिन, मैं उसे ऐसा बना दूंगी कि तू अपने पेट की लड़की को न पहचान सके । हाँ, देख के हैरान रह जाओगी कि यह राजा के बाग का गुलाब कहाँ से आ गया ?··· क्या समझती हो तुम !"

माँ ने पड़ोसिन की ओर देखकर विस्मय प्रकट किया—"सच्ची, सच कह रही हो जग्गो की माँ !"

पड़ोसिन ने अपना आश्वासन दोहराया—"और नहीं तो क्या !" पहली दफा वह कलियानपुर वाले मितरां को देखने आए थे, तब नहीं मैंने तुमसे कहा था कि लाओ बहिन लड़की का बनाव-सिंगार कर दूं । तुम्हीं नहीं मानी । नहीं तो काहे को वह झगड़ा होता ।"

माँ हाथ मल कर पछतायी—"हाय मेरे राम ! क्या कह रही हो बहिना ।" अपने ऊपर से यह उत्तरदायित्व दूर करने के भाव से हाथ हिलाया, "बहिना मैं क्या नहीं मानी ? वह तो लड़की ही ऐसी है ।" पड़ोसिन के कंधे पर हाथ रखकर रहस्य में कहा, "बहिन, तू जानती है, सभी लड़कियों को शौक होता है । माँग कर, लड़-झगड़ कर बनाव सिंगार को चीजें लेती है । यह जाने कैसी करमजली बैरागन मेरे पेट से जन्मी है ? कभी इसने इन चीजों की तरफ देखा ही नही ।'

पड़ोसिन ने समझाया—"वाह बहिना, सिंगार ही तो जवानी में औरत का रूप है । दो-चार बाल-बच्चे हो गये तो कौन सिंगार करता है और किसे देखने की फ्रसत रहती है ? अरे, तू क्या नहीं जानती ?"

माँ ने रहस्य की बात कहने के लिये पड़ोसिन की ओर सरक कर कहा—"हाय राम, वह मरी तो कहती है, मुंह पर रंग पोत कर धोखा क्यों दूँ ? रंग झड़ जायेगा तो कोई क्या कहेगा ?"

पड़ोसिन ने फिर समझाया—"हाय बहिना, तुम भी क्या कहती हो । रूप तो बनाव-सिंगार का होता है । रूप-सिंगार तो तू जानती है, एक बार देखा जाता है, पसन्द के बखत । रोज देखने में वह बात कहाँ रहती है । छः महीने में तो सब पुराना पड़ जाता है । घर की चीज का रूप कौन देखता है ? फिर तो काम देखती है दुनिया । बहिन, औरत का बनाव-सिंगार तो ऐसा है, जैसे मिठाई पर लगी चाँदी । खाने में चांदी का स्वाद थोड़े ही आता है, मिठाई का ही आता है ।" पड़ोसिन ने तर्जनी दिखाकर कहा—"तू जान, मिठाई जब तक बिकती नहीं, तभी तक बरक लगाया जाता है । झूठ कह रही हूँ क्या ?'

माँ ने समर्थन में हामी भरी—"हाँ, और क्या मितरां को बुलवाया नही तुमने ?"

पड़ोसिन बोली—"अरे मैं तो भीतर सब जगह देख आयी । कहीं दिखाई नही

दी । उर्मी से भी पूछा । वह कहने लगी कि बहिन कोठरी मूंद कर बैठ गयी है ।"

माँ ने ज़ोर से आवाज़ दी—"उर्मी··· ओ उर्मिला ।··· "

"हाँ, माँ जी !" उर्मिला ने भीतर से उत्तर दिया ।

पड़ोसिन ने फिर पूछा—"कैलाश के पिता जी नही आये अब तक ?"

माँ ने कह दिया—"आते ही होंगे ।"

उर्मिला कमरे में आ गयी ।

माँ ने उर्मिला से पूछा—"मितरा कहाँ है ? बुला न उसे । मौसी आयी हैं राह देख रही हैं ।"

उर्मिला ने उपेक्षा से उत्तर दिया—"कई बार तो बुलाया माँ जी ! जीजी कहती है, मुझे यह सब नहीं पसन्द ।"

माँ ने उँगली गाल पर रखकर पड़ोसिन की ओर देखा—"हाय राम जी !"

पड़ोसिन ने विवशता में दोनों हथेलियाँ फैला दीं—"बहिना, तो फिर मैं क्या करूँ ?"

बराम्दे की ओर से पंडित हरप्रसाद की पुकार सुनाई दी—"बेटा उर्मिला !"

उर्मिला ने माँ से कहा—"पिताजी आ गये माँ !" और बराम्दे की ओर चली गयी ।

पड़ोसिन ने माथे पर आँचल खींच लिया और अपनी पोटली समेटती हुई बोली—"अच्छा बहिना तो मैं चलूं । कैलाश के पिताजी आ गये । वह जल्दी में उठकर खड़ी हो गयी । तो कब आ रहे हैं वे लोग ? मैं भी आकर लड़के को जरा देख जाऊंगी । कैसा है लड़का ?"

माँ ने गाल पर हाथ रखकर कहा—"हाय राम, मैं क्या जानूं बहिना ! मैंने कहां देखा है अभी ?"

कैलाश के पिता कमरे मे आ गये । उन्हें देख पड़ोसिन घूंघट खींच कर तुरन्त चली गयी ।

पंडित हरप्रसाद पक्की उम्र के सज्जन हैं । लम्बी-लम्बी मूंछें प्रायः खिचड़ी हो गयी हैं । सिर पर क्रिस्टी टोपी उनके पुराने विचारों और न

बदलने वाले अभ्यासों का प्रमाण ेती है। उनकी पोशाक सदा एक सी, बंद गले का कोट और ढीला-सा चूड़ीदार पायजामा रहती है।

पंडित जी ने हाथ की छड़ी उर्मिला की ओर बढ़ाकर कहा—"बेटा, भगवान भला करे, रक्खो इे।" और कैलाश की माँ से शिकायत के स्वर में बोले, "तुम लोग कर क्या रहे हो? भगवान भला करे तुमने अभी तक जगह भी ठीक नही की? बाजार से कुछ मँगवा लिया है कि नहीं? सुनती नहीं हो, उन्होंने इसी समय आने को कहा है! अभी आ जायं तो?"

माँ ने बताया—"कैलाश गया तो है। दस कदम पर चौक है। अभी हो जाता है सब कुछ। वे लोग तो दिन डूबे आयेंगे।"

पंडित जी ने परेशानी में हाथ बढा कर पूछा—"कौन कहता है, दिन डूबे आयेंगे। अभी रामनाथ बैंक में आये थे। कह गये हैं—तुम घर चलो, हम उन लोगों को लेकर आते हैं।"

माँ ने गाल पर उंगली रख कर विस्मय प्रकट किया—"हाय मेरे रामजी, दोपहर में तुम्हीं तो कह गये थे कि सात बजे आयेंगे।"

पंडित जी ने समर्थन किया—"भई, रामनाथ सुबह आये तो सात ही बजे की बात थी। भगवान भला करे, शाम को फिर कह गये कि अभी लेकर आते है। तुम जानती तो हो नहीं कि लडके का बड़ा भाई इलाहाबाद से आया हुआ है। उसे रात की गाडी से लौट जाना है। बात तो उसी को करनी है। जब वह चाहेंगे, तब आयेंगे। मै रोक सकता हूँ उन्हें जल्दी आने से!"

माँ खड़ी होकर बोली—"तो घबराते क्यों हो। सब हो जायेगा। कैलाश एक मिनिट में आता ही होगा। कब का गया है। दस कदम पर तो चौक है। उर्मिला जा, जाजम और कालीन उठा ला। मैने निकाल कर रख दिये है।"

पंडित जी ने फिर टोका—"भगवान भला करे, पन्नालाल के यहाँ से कुछ फूल-ऊल मँगा लिये होते। फूलदान तो घर में थे ही। कोई अगर-बत्ती वगैरह जला दी होती। ऐसे मौके पर सब किया ही जाता है। भगवान भला करे, चाय बनवा रही हो न? शरबत भी तैयार रखना। शायद वे लोग चाय न पीते हों?" पंडितजी ने परेशानी में कोट उतार कर खूंटी पर लटका दिया और बोले, "मैं तो जानता

था, मेरे किये बगैर कुछ न होगा।"

उर्मिला जाजम और कालीन ले आयी और अपनी माँ की सहायता से कमरा सजाने लगी।

पंडित जी आस्तीने चढ़ाने लगे—"लाओ मैं भी कुछ करूं। मैं नही करूँगा तो कुछ नही होगा। भगवान भला करे, तुम यह थोड़े ही समझती हो कि किस समय किस चीज की क्या बात होती है?" वे कालीन उठाने के लिये झुक गये, "वे लोग अभी आ जायें तो?"

माँ ने पडित जी के हाथ से कालीन ले लिया—"हाय राम, क्या कर रहे हो। तुम और गड़बड़ा देते हो। तुम बैठो, हो जाता है। तुम देखते रहो, अभी हो जाता है।"

पडित जी ने बैठ कर पूछ लिया—"कैलाश कहाँ गया?"

उर्मिला सजावट के काम में लगी रही बोली नही।

माँ ने हाथ उठाकर कहा—"हाय राम जी कैसे घबरा जाते हो। कहा तो तुमसे, बाजार मे मीठा-नमकीन लेने भेजा है। अभी आता होगा।"

पडित जी ने पूछा—"मीठा-नमकीन? उसे कुछ फल-वल लाने को नहीं कहा?"

उर्मिला बिछे हुए कालीनों पर गाव तकिये ला कर रखने लगी।

माँ ने तकियां को सिधाते हुये आश्वासन दिया—"हाय राम जी, फल लाने के लिये भी कह दिया है। तुम तो ऐसे घबरा देते हो।"

पडित जी ने पूछा—"कौन सा फल? भगवान तुम्हारा भला करे, बता तो दिया होता उसे क्या फल लाना है। नासमझ लड़का है, कहीं ककड़ी-खीरा ही न उठा लाये! ऐसे समय दस-पांच रुपये की परवाह नहीं की जाती, उसे समझा देना था।"

माँ ने मसनदों के बल निकालते हुए आश्वासन दिया—"हाँ, हाँ, सब हो जायगा भई। तुम जाकर मुंह-हाथ तो धो लो। तुम उन लोगों को यहाँ बैठाना। इतने मे हम लोग भी तैयार हो जायंगी।"

कैलाश और चेतन मिठाई की और फलों की टोकरियाँ लिये हुआ आ जाते हैं।

माँ ने उन्हें देखकर पडित जी से कहा—"यह लो, आ गया सब सामान। अब जाओ न मुंह-हाथ धोकर कपड़े बदल लो।" माँ ने उर्मिला की

ओर देखा, "तू और कैलाश यह ठीक करो। मैं तुम्हारे पिता जी के लिये कपड़े निकाल दूं।"

पंडित जी ने कैलाश को शाबाशी दी—"बेटा, भगवान भला करे, जल्दी-जल्दी कर डालो। वे लोग आते ही होंगे।" वे तैयारी में सहयोग देने के लिये फिर आस्तीन समेटने लगते हैं।

माँ ने झुंझलाहट प्रकट की—"हाय राम, तुम जाओ। ये सब कर लेंगे।"

कैलाश की माँ मिठाई और फल लेकर कैलाश के पिता के साथ भीतर चली गयी। उर्मिला अंगीठी की कानस पर अगर बत्तियाँ जलाने लगी।

चेतन ने उर्मिला की ओर संकेत करके कैलाश से कहा—"देखो तो इस लड़की को, बहुत खुश है आज। जब इसकी बारी आयेगी तो हम लोगों को ही तैयारी करनी होगी।"

उर्मिला ने हंसी को क्रोध में दबा कर कहा—"भैया, कैसी बातें करते हो। हमे नहीं अच्छा लगता। हम तो शादी करेंगे ही नहीं।"

चेतन ने विस्मय का नाट्य किया—"शादी नहीं करोगी ? ‥ तो क्या करोगी ?

उर्मिला ने कहा—"क्यों ? ‥ हम पढ़ेंगे।"

कैलाश हंस दिया—"हट पागल, शादी अच्छी जगह हो जाये इसीलिये तो लडकियां पढ़ती है।"

उर्मिला ने शोखी मे अंगूठा दिखा दिया—"आहा, बडे आये ?…… आपको जरूरत है, आप कीजिये शादी। हम क्यों करें !"

चेतन ने कैलाश से कहा—"अच्छा भाई, अब मैं चलता हूँ।"

कैलाश चेतन के समीप हो गया—"क्यों ? जा क्यों रहे हो ? अभी न जाओ, ठहर जाओ तो क्या है ?"

चेतन ने कहा—"कुछ नहीं। ठहर भी सकता हूँ लेकिन यहाँ मैं क्या करूंगा?"

कैलाश ने उर्मिला की ओर देखकर कहा—"यह बत्तियाँ-वत्तियाँ मैं जला लूँगा। तू फूल और फूलदान तो ले आ। देख, वह छोटी मेज़ भी लाना। जा, जल्दी जा।"

उर्मिला बाँयें दरवाजे से चली गयी।

कैलाश चेतन के और समीप होकर बोला—"मेरा खयाल है, तुम यहीं रहो तो अच्छा है" वह कुछ अटका, "तुम‥‥तुम जानते हो, पिछली बार ऐसे अवसर पर अच्छा अनुभव नही हुआ।"

चेतन ने उसकी ओर जिज्ञासा से देखा—"क्या मतलब तुम्हारा ?"

कैलाश का स्वर खिन्न हो गया—"आई डू नाट वांट मितरां टुबी इंसल्टिड (मैं इस बार सुमित्रा का अपमान नहीं होने देना चाहता) आखिर उसका कसूर क्या है ? उसके चेहरे पर चेचक के दाग हैं तो वह क्या करे ?"

चेतन विचार में डूब गया—"तुम जो कहो, मैं तैयार हूँ लेकिन मैं करूंगा क्या ? ···तुम जानते हो, अगर मितरां के प्रति कुछ ऊटपटांग बात हुई तो भाई मुझे बहुत बुरा लगेगा।"

कैलाश इधर-उधर देख कर हाथ मलते हुए बोला—"जानता हूँ।······ खैर, क्या कहूं। अभी तो कुछ नहीं कह सकता लेकिन वैसी स्थिति हुई तो तुम्हारा भरोसा कर सकता हूं। ऐसे समय तुम यहाँ रहो तो अच्छा ही होगा।"

चेतन मान गया—"जो कहो। मैं नहीं जाता। मुझ से तुम लोगों के लिये जो कुछ भी बन पड़े, तैयार हूँ।"

कैलाश के पिता एक तौलिये से हाथ-मुंह, मूंछे पोछते हुए फिर आ गये। वे अब कुर्ता-धोती पहने थे।

पंडित जी ने 'हरि ओम, हरि ओम भगवान भला करें' कह कर पूछ लिया—"बेटा सब ठीक हो गया ?"

कैलाश ने सान्त्वना दी—"जी हाँ, सब कुछ हो गया।"

उर्मिला फूल और फूलदान ले आयी। कैलाश ने फूल लेकर चेतन की ओर बढ़ा दिये—"जरा लगा दो !"

चेतन फूलदान मे फूल लगाने लगा।

पंडित जी ने कैलाश से पूछा—"सुनो बेटा···कुछ फल-वल लाये हो ?"

कैलाश ने समाधान किया—"जी एक दर्जन संतरा, एक दर्जन केला, थोड़ा अमरूद भी लाया हूं।"

पंडित जी ने उँगली से केश खुजाते हुए असंतोष प्रकट किया—"कोई और अच्छी चीज ले आते !"

कैलाश ने कहा—"अच्छा ही है और क्या लाता ! अनार तो अढ़ाई रुपये सेर है। बीमारों के लिये ही समझिये।"

पंडित जी ने कह दिया--"ले आते, क्या था, खैर...."

बराम्दे से पुकार सुनाई दी--"कैलाश ! उर्मिला बेटी !"

पंडित जी घबरा गये--"अरे, वे लोग तो आ गये। जल्दी करो न ?"

कैलाश ने उन्हें चिंता न करने के लिये कहा--"सब हो गया। आप उन्हें लाइये। उर्मिला, छोटी मेज़ जल्दी ला। फूल काहे पर रखे जायेंगे।

पिता और कैलाश आगन्तुकों का स्वागत करने बाहर चले गये। उर्मिला झपट कर तिपाई ले आयी। चेतन उर्मिला के हाथ से तिपाई लेकर कोने में रख कर फूलदान में फूलों को संवारने लगा।

चेतन ने फूल सँवारते हुए उर्मिला से कहा--"इसके मन में कैसे लड्डू फूट रहे हैं। बड़ी बहिन की शादी हो जाय तो यह घर की बड़ी समझी जाने लगे, क्यों ?"

उर्मिला ने हामी भरी—"और नही तो क्या ? फिर आप मुझे पढ़ायेंगे न ?,'

चेतन ने सोच कर कहा—"तुम्हें ? ...म जिसे पढ़ाता हूं, उसकी शादी जल्दी हो जाती है।"

उर्मिला--"एहे, बड़े आए। हम करेंगे ही नहीं शादी।"

कैलाश और उसके पिता मेहमानों को रास्ता दिखाते हुए भीतर से ले आये। कालीन पर रखे हुए गाव तकियों के समीप बैठने का उनसे आग्रह और अनुरोध किया।

मेहमानों में पडित रामनाथ लगभग कैलाश के पिता की आयु के थे। उनके साथ पंडित ज्ञानचन्द लगभग चालीस वर्ष की आयु के थे। कुर्ता-धोती पहने और अंडी की चादर ओढ़े हुए थे। ज्ञानचन्द के छोटे भाई, संभावित वर नवयुवक धर्मचन्द चुस्त अचकन और चूड़ीदार पायजामा पहने था। ज्ञानचन्द की स्त्री एक बढ़िया रेशमी साड़ी में थी। उन्हें रूपवती नही कहा जा सकता था परन्तु ठसक जरूर थी। वे काफी गहना भी पहने थीं।

अतिथियों और अतिथि सत्कार करने वालों में तकियों के पास बैठने में पर्याप्त तकल्लुफ हो जाने पर अतिथियों को आदर से तकियों के पास बैठा कर कैलाश और उसके पिता उनके सामने बैठ गये। कैलाश ने चेतन को संकेत से बुलाकर अपने पास बैठा लिया। पंडित हरप्रसाद ने अत्यन्त विनय से वर पक्ष के लोगों का कुशल-क्षेम पूछा। दो वाक्य लखनऊ के मौसम के बारे में

कहे। इलाहाबाद के मौसम का हाल पूछा।

रामनाथ ने ज्ञानचन्द की ओर संकेत किया—"आप पंडित ज्ञानचन्द जी हैं। आप से तो चर्चा हुई थी न ?....आप इलाहाबाद हाईकोर्ट में पेशकार हैं। क्या कहना !....बड़े ही सज्जन पुरुष हैं। इलाहाबाद में बड़े-बड़े वकील, बैरिस्टर सब लोग आपकी बहुत प्रशंसा करते हैं। बहुत बड़ा रसूख है। बहुत ही भले आदमी हैं।"

पंडितजी ने हाथ जोड़कर ज्ञानचन्द को नमस्कार किया— "जी हाँ, आपकी प्रशंसा तो बहुत सुनी थी, भगवान् भला करें, दर्शन करने का सौभाग्य आज हुआ।" उन्होंने दुबारा हाथ जोड़े, "बहुत आनन्द हुआ।"

रामनाथ ने कैलाश के पिता की ओर संकेत कर विनय की हंसी से कहा—"अकाउन्टेन्ट साहब !"

ज्ञानचन्द ने प्रत्युत्तर में हाथ जोड़े—"जी, यह तो हमारा सौभाग्य है।" उन्होंने रामनाथ की ओर संकेत किया, "पंडित जी की कृपा से आप के दर्शनों का अवसर मिला।"

पंडित जी ने कैलाश को धीमे से कहा—"बेटा, अपनी माता जी को बुलाओ न !... कहो बहिन जी आयी हैं।"

रामनाथ ने ज्ञानचन्द की ओर संकेत किया—"इनका तो धर्म ही है, लोगों की सहायता और सेवा करना। नहीं तो आप जानते है, अदालतों का तरीका ? पर इनकी तो बात ही दूसरी है। इनके हाथों कभी किसी का अनिष्ट नहीं......"

पंडितजी ने उत्साह से टोककर स्वीकार किया—"जी हां, जी हाँ, सज्जनों का तो ऐसा ही स्वभाव होता है।"

ज्ञानचन्द ने हाथ जोड़ कर पान से रंगे दाँत निकाल दिये—"जी, हम किस लायक हैं ? आप लोगों की दया से जो बन पड़ता है, सेवा करने का यत्न करते हैं।... यह सब तो सब ईश्वर की दया है। आप जानते हैं, मनुष्य बेचारा क्या कर सकता है।"

रामनाथ बोले—"ऐसे सज्जनों का सत्संग और परस्पर सम्बन्ध तो भगवान की दया से ही होता है हरप्रसाद जी ! जैसे आपका परोपकारी स्वभाव है, बस वैसे ही ज्ञानचन्द जी को समझिए। बस, समझ लीजिए बिलकुल....क्या कहते हैं, हां हमने सोचा कि सज्जनों का सज्जनों से ही

सम्बन्ध हो, तभी भगवान की इच्छा पूर्ण होगी। हरे कृष्ण! हरे गोविन्द!" उन्होंने भगवान को हाथ जोड़कर मूंछो पर हाथ फेर लिया।

कैलाश की माँ पुरानी धोती बदल कर रेशमी साड़ी पहिन कर आयीं। वर की भाबी ने सरक कर उनके लिये अपने समीप स्थान कर दिया।

वर की भाबी ने कहा--"राम-राम बहन जी!"

कैलाश की माँ—"राम-राम बहिन जी।" कहकर उनके समीप बैठ गयी।

रामनाथ ने कैलाश की माँ से ज्ञानचन्द की पत्नी का परिचय कराया—"आप ज्ञानचदजी के छोटे भाई धर्मचन्दजी की भाभी है। बड़ा दयालू स्वभाव है।

कैलाश की माँ ने एक बार और हाथ जोड़कर कहा—"बहुत आनन्द हुआ बहिनजी आपके दर्शन से······"

भाभी ने आग्रह किया—"नहीं बहिनजी नहीं, हम किस लायक है; आपके दर्शनों की हमें तो बड़ी इच्छा थी। बहिनजी, आपकी बहुत तारीफ सुनी थी।"

कैलाश की मां ने भी आग्रह किया—"नहीं भैनजी, हम किस लायक हैं? हमें तो आपके दर्शन से बड़ा आनन्द हुआ। घर मे आपके चरण आये तो यह घर पवित्र हो गया।"

रामनाथ ने कैलाश की माँ की ओर सकेत किया--"आप कैलाश की माँ है। बस अन्नपूर्णा हैं! देवी समझिये!" फिर धर्मचन्द की ओर संकेत किया, "आप हैं धर्मचन्द जी, ज्ञानचंद जी के छोटे भाई। वकालत पास कर रहे है।"

ज्ञानचन्द हरप्रसाद से बोले—"हाँ, भाई साहब, मैंने कहा--नौकरी क्या करोगे। नौकरी की भी कोई जड़ होती है? हमने उम्र भर नौकरी करके देख लिया······"

हरप्रसाद ने समर्थन किया—"जी हाँ भगवान भला करे, नौकरी की भला क्या जड़ हो सकती है! अब देखिये, नौकरी करते-करते मेरी यह उम्र हो गयी, फिर भी क्या है। एक उम्र में आकर आदमी को रिटायर भी तो होना पड़ता है।"

ज्ञानचन्द ने उनका समर्थन किया—"जी हाँ, जी हाँ। अपना भी तो यही हाल है। नौकरी का क्या भरोसा? ठीक कह रहे हैं आप। इसीलिये

मैंने कहा, इलाहाबाद में तो सभी लोग जान पहचान के हैं। यह वकालत कर ले……"

रामनाथ उत्साह से बोल उठे—"अजी, आपकी बदौलत इलाहाबाद की अदालतें तो इनकी अपनी ही समझिये। वरना तो" उन्होने हरप्रसाद के कंधे पर हाथ रख दिया, "भाई साहब आप जानते हैं वकीलों का जो हाल है ?"

पंडितजी ने गर्दन ऊंची कर स्वीकार किया—"जी कुछ न पूछिये। वकीलों का तो बहुत बुरा हाल है। सबका एक ही सा हाल है।"

रामनाथ ने धर्मचन्द की ओर संकेत किया—"लेकिन इनके लिये तो वकालत जमी-जमाई समझिये।" उनका हाथ ज्ञानचन्द की ओर होगया, "इनके कहने की कौन मुवक्किल उपेक्षा कर सकता है ?"

पंडितजी ने प्रबल समर्थन किया—"जी हाँ, यह तो है ही। भगवान भला करे। भले आदमियों का तो ऐसा ही कायदा है पंडितजी !" वे धीमे से कैलाश से बोले, "बेटा कैलाश, कुछ चाय-वाय तो मंगाओ।…… बहन से कहो, चाय भिजवाये।"

रामनाथ ने दोनों हाथों से इन्कार किया—"न-न-न-न ! कोई आवश्यकता नहीं। यह कष्ट न कीजिए ! चाय की बात रहने दीजिए। पीकर ही आ रहे हैं।" उन्होंने ज्ञानचन्द की ओर देखा, "है न भाई साहब ?"

पंडितजी ने हाथ जोड़ अनुरोध किया—"तो शर्बत पीजिये।"

ज्ञानचन्द ने हाथ हिलाकर कर इंकार किया—"ऊं, हूं, ना……ना ! कष्ट न कीजिये। अभी पी के ही आ रहे है, क्यों रामनाथजी !" वे विनय से हंस दिये, "अभी तो कष्ट न कीजिये।"

पंडितजी भी प्रत्युत्तर में हंसे—"है, हैं, कोई कष्ट नहीं ?…… कष्ट की क्या बात है ? ऐसे ही जरा थोड़ी सी चाय-वाय। उसमें क्या है ? बस नाम ही है।"

कैलाश ने दरवाजे में आकर पुकार दिया—"उर्मिला…… जरा चाय तो ले आओ !"

कैलाश की माँ उठती हुई बोली—"मै भिजवाती हूं। एक मिनट में" वे भीतर चली गयीं।

रामनाथ फिर भी कहते रहे—"नहीं-नहीं चाय का भाई साहब आप व्यर्थ कष्ट कर रहे है। आपके तो दर्शन ही से इतना सुख प्राप्त हो जाता है।

बाबू ज्ञानचन्द अपने पुराने मित्र हैं। यहाँ कुछ जमीन लेकर मकान बनवाने का इरादा कर रहे थे इसीलिये इलाहाबाद से आये थे।"

पंडितजी ने इस सूचना के लिये प्रसन्नता प्रकट की—"बहुत ठीक, बहुत ठीक पण्डितजी, मैं तो कहता हूं जमीन-जायदाद ही असली चीज...."

रामनाथ ने उन्हें टोक दिया—"धर्मचंद भी साथ थे। ऐसे अवसर पर सोचा कि आप लोगों से परिचय हो जाय" वे हंस पड़े, "क्यों ज्ञानचन्द जी ?"

पंडितजी ने तुरंत स्वीकार किया—"बड़ी कृपा की आपने हम लोगों पर। बड़े सौभाग्य से सज्जनों के दर्शन होते है।"

ज्ञानचन्द ने कहा—"यह तो हमारा ही सौभाग्य है। बहुत प्रशंसा आपकी सुनी थी। दर्शन की बहुत इच्छा थी पर..."

रामनाथ बोले—"हाँ और यह बात भी हुई थी आप से कि अपनी बेटी बी० ए० में पढ़ती है। बहुत ही सुशील है। यह समझिये" वे ज्ञानचन्द की ओर घूम गये, "ज्ञानचन्द जी, कि कालिज में पढ़ने वाली लड़कियां जैसी होती हैं; वह बात बिलकुल नहीं।" उन्होंने इंकार में हाथ हिला दिया, "बहुत ही सीधी; गाय समझिये। घर का सब कामकाज करती है।"

भाबी ने राय दी—"हाँ, हाँ जी, भले घरों में ऐसा न हो तो कैसे चले ?"

रामनाथ बिना रुके बोलते गये—"वैसे तो ईश्वर की दया से हरप्रसाद जी के घर में नौकर है, महरी है...."

ज्ञानचन्द ने अनुमोदन किया—"जी हाँ, जी हाँ, वाह क्यों नही, क्यों नही..."

रामनाथ कहते गये—"परन्तु लड़कियाँ ऐसी सुशील हैं कि सब काम अपने हाथ से करती है। भोजन तो आपके घर में अमृत होता है, अमृत ! लड़कियाँ ही बनाती हैं।"

ज्ञानचन्द ने साथ दिया—"शरीफ घरों का तो कायदा ही है। अपने ब्राह्मण परिवारों का यही चलन चला आया है। भाई साहब, नौकरों के हाथ की रसोई भला कोई रसोई होती है, हां कहिये !..."

रामनाथ बोले—"नौकरों के हाथ की रसोई तो गले के नीचे नही......"

हरप्रसाद भी बोले—"यह तो आप लोगों की दया है परन्तु भगवान भला करे, कैलाश की माँ ने तो बचपन से ही लड़कियों को घर संभालने की शिक्षा दी है। उस बिचारी की तो आप जानते हैं, भगवान भला करे, सेहत ही ठीक नहीं रहती। लड़कियाँ ही सब घर संभालती है।"

रामनाथ ने उनकी बात ले ली—"हां, हां, इसीलिए तो सोचा कि ज्ञानचन्दजी आये हुए थे और धर्मचन्द भी सौभाग्य से साथ थे। समझिये न; स्वर्ण अवसर ! ... आप लोग जानते हैं कि अच्छे सम्बन्ध मिलते कहाँ हैं ? आप लोग आये हैं तो ऐसे अवसर पर कुछ बातचीत ही हो जाये, और क्या ?"

कैलाश की मां सुमित्रा और उर्मिला के साथ चाय का सामान लेकर आयी। सुमित्रा एक अच्छी सूती किनारेदार बादामी रंग की साड़ी पहने थी। उसका चेहरा गम्भीर और झुका हुआ था। चेहरे पर पाउडर या सुर्खी कोई चीज नहीं थी। उर्मिला रेशमी साड़ी पहने थी।

रामनाथ ने सुमित्रा की ओर सकेत कर ज्ञानचन्द से कहा—"ये है बेटी सुमित्रा, कैलाश की बहिन। बी० ए० मे पढ़ती है। बहुत ही गौ लड़की है, पण्डित जी ! ये उर्मिला है, छोटी बहिन।" वे उर्मिला से बोले, "कहो बेटी उर्मिला, कौन सी जमात में पढ़ रही हो ?"

उर्मिला ने लज्जा से सिर झुका कर कहा—"नाइन्थ में।"

रामनाथ ने और पूछा—"कौन से स्कूल में पढ़ती हो बेटी ?"

पडित जी ने उत्तर दे दिया—"यह तो जुबली गर्ल्स हाईस्कूल में पढ़ती है।"

रामनाथ ने उनसे कहलवाया—"बेटी सुमित्रा तो कालिज में पढ़ती है न ?"
सुमित्रा सिर झुकाये चुप रही।

कैलाश की मां बोली—"जी हां, एफ० ए० पास कर लिया है। बी० ए० मे दाखिल हुई है। इसके पिता जी कहते है, पढ़ ले क्या हर्ज है।" उन्होने सुमित्रा से कहा, "बेटी, चाय तो बनाओ।"

उर्मिला तश्तरियों मे फल और मिठाई रख कर मेहमानों के सामने रखती गयी। इस बीच मेहमानों और यजमानों में आप लीजिये, पहले आप कह कर विनय प्रदर्शन होता रहा।

रामनाथ ने फिर बात उठायी—"बहुत अच्छा है ! विद्या का क्या कहना ? सबसे बड़ा धन समझिये !"

ज्ञानचन्द ने भी अनुमोदन किया—"जी हाँ, ऐसा तो होना चाहिए। विद्या बड़ी चीज है।"

पंडितजी ने भी साथ दिया—"जी हाँ, यही सोचा कि शिक्षा तो जरूरी है

ही । भगवान भला करे, शिक्षा के बिना तो आप जानते हैं, लड़का हो या लड़की; मनुष्य नहीं बन सकता और अब जैसा ज़माना आ गया है उसमें तो शिक्षा न होने से निर्वाह ही नहीं हो सकता" उन्होंने रामनाथ की ओर देखा, "क्यों पंडित जी ?"

कैलाश की मां ने धर्मचन्द की भाबी से बात की—"देखिये बहिनजी, लड़कियों की पढाई पर खर्च तो बहुत हो जाता है ? आप जानती हैं, लडकों से भी ज्यादा । लड़कियों से तो लड़कों को पढ़ाना आसान है ।"

भाबी ने हामी भरी—"अरे हाँ, बहिन जी ठीक कहती हैं आप । लड़कों का क्या, पैदल स्कूल चले गये । दूर हुआ, एक साइकिल ले दी पर लड़कियों के लिये स्कूल आने-जाने का ही सबसे बड़ा खर्चा हो जाता है । हमारी लडकी तो स्कूल की बस में जाती है । लड़कियों को पैदल कैसे… "

कैलाश की मां ने भी बता दिया—"हाँ बहिन जी, हां हमारी लड़कियां भी स्कूल की मोटर में जाती हैं । हमीं जानते हैं कि कितना झंझट होता है । लडकों का क्या है बहिन जी … "

रामनाथ ने दोनों महिलाओं का साथ दिया— "यह तो है ही । लड़कों की बात तो दूसरी है । लड़कियों की तो विशेष चिन्ता करनी ही पड़ती है । वही तो लक्षमी होती है ।" H82/4291N

हरप्रसाद ने उनका समर्थन किया—"ठीक कह रहे है पंडित जी । भगवान भला करे, घर भी तो लड़की की ही बुद्धि से चलता है ।"

रामनाथ ने उनका समर्थन किया—"बहुत ठीक, क्या कहा अकाउन्टेंट साहब ने ! घर तो लड़की की ही बुद्धि से चलता है ।" उन्होंने ज्ञानचन्द से पूछा, "क्यों पंडित जी ।" P.G.H 3759

ज्ञानचन्द ने भी स्वीकार किया—"निस्संदेह ! निस्संदेह ! ठीक कहते है आप । ठीक ही कहा अकाउन्टेंट साहब ने । घर तो गृहिणी से ही होता है । पंडित जी, घरवाली को सलीका हो तो आदमी के दस ऐब भी छिप जाते हैं और अगर घरवाली फूहड़ हो तो आदमी हजार कमा कर लाये, घर कभी पनप नहीं सकता ।… …"

रामनाथ ने टोककर सराहना की—"वाह ! वाह ! क्या बात कही पण्डित जी ने । स्त्री फूहड़ हो तो घर बिलकुल बरबाद हो ही जायगा ।"

हरप्रसाद ने विनय से याद दिलाया—"यह चाय ठण्डी हो रही है ।"

ज्ञानचन्द जैसे भूल ही गये थे—"हाँ, यह तो अकाउन्टेंट साहब, आपने बहुत कष्ट किया।……"

हरप्रसाद ने विश्वास दिलाया--"नहीं नही, कष्ट क्या, यह तो हम लोगों का सौभाग्य है। आपके चरणों की धूल, भगवान भला करे, इस घर में बनी रहे। हैं, हैं, लीजिये न" समोसों की तश्तरी ज्ञानचन्द और रामनाथ के सामने कर आग्रह किया, "लीजिये न पँडित जी !"

रामनाथ ने समोसा लेकर चाय के प्याले से घूंट भर लिये--"यह तो आपने बड़ी पक्की बात कही पंडित जी। तभी तो हमारे शास्त्रों में स्त्री को देवी कहा गया है और कहा है कि घर के धर्म की रक्षा स्त्री से ही होती है।"

हरप्रसाद जी ने भी हामी भरी--"जी हाँ, धर्म की रक्षा तो स्त्रियां ही करती हैं।"

रामनाथ और उत्साहित हो गये। प्याला नीचे रख कर हाथ उठा कर बोले—"देखिये न, हमारे धर्म में धरती को ही माता कहा गया है, सब नदियों को माता कहा गया है। हमारे हिन्दू धर्म में तो स्त्री को माता ही माना गया है।" उनका हाथ ऊँचा उठ गया, "और तभी तो स्त्री को धर्मपत्नी कहा गया है क्योंकि धर्म का पालन करती है।"

भाबी ने चाय का प्याला नीचे रख कर पूछ लिया—"इसके कालिज में गाना भी तो सिखाया जाता होगा। इलाहाबाद में तो……"

कैलाश की माँ ने तुरंत विश्वास दिलाया—"हाँ बहिन जी, गाना सिखाने के लिये तो हम लोगों ने सूरदास गुरू जी को भी रखा हुआ था। तानपूरा, हरमोनिया बाजा भी है। दोनों लड़कियों ने गाना सीख है। इसे तो कई दफा गाने में स्कूल मे इनाम मिला है।"

चाय के प्याले खाली होने पर सुमित्रा उन्हें भरने लगी। उर्मिला जिस तश्तरी में जो चीज समाप्त होती देखती है, रखती जा रही थी।

रामनाथ ने अपनी तश्तरी में और मिठाई रखी जाने पर विरोध किया—"ना ना, बेटी, क्या कर रही हो ?" उन्होंने हरप्रसाद को सम्बोधन किया, "पंडित जी यह तो आप बहुत कष्ट कर रहे है।"

हरप्रसाद ने गदगद भाव से हाथ जोड़कर कहा—"भगवान भला करे, इसमें

है ही क्या ? लीजिये न, इतना तो और लीजिये। सब चीजें शुद्ध घी की हैं……"

ज्ञानचंद ने अपनी प्लेट पर बढ़ाया हाथ पीछे हटाते हुए कहा—"बस क्षमा कीजिये अकाउन्टेंट साहब, मेरा तो मेदा यों ही कमजोर रहता है…"

कैलाश की मां ने धर्मचन्द की भाबी से आग्रह किया—"आप लीजिये न बहिन जी !"

उर्मिला ने उसकी तश्तरी में मिठाई रख दी।

धर्मचंद की भाबी ने ऊंचे स्वर में इन्कार किया—"न, न, बहिन जी, बस बस ! हां बहिन जी, यहाँ लड़कियों के स्कूल-कालिजों में तो सीने-पिरोने, बुनने-बुनाने का काम भी तो सिखाया जाता है ?"

कैलाश की मां ने स्वीकार किया—"हाँ-हाँ; बहिन जी; हम लोगों के घर की लड़कियाँ भला यह काम न सीखें, यह कैसे हो सकता है ?" उन्होंने बीच में बिछे बढ़िया कढ़े हुए मेजपोश की ओर संकेत किया, "देखिये, यह सुमित्रा का ही तो काढ़ा हुआ है।"

रामनाथ ने मेजपोश की ओर बहुत ध्यान से देखा—"वाह, वाह ! बहुत सुन्दर !" ज्ञानचन्द का ध्यान भी मेजपोश की ओर आकर्षित कर बोले, "देखा, आपने ? ……देखिये तो !"

ज्ञानचन्द ने हाथ का प्याला तश्तरी में रखकर मेजपोश की ओर ध्यान से देख कर सराहना की—"क्या कहना साहब ! बहुत खूब ! क्या बारीक काम है। बहुत ही सुन्दर। बहुत ही सुन्दर किसने बनाया है ?"

कैलाश की मां ने हाथ फैलाकर कहा—"यह तो कुछ भी नहीं। सुमित्रा तो बहुत बढ़िया काम करती है। बढ़िया चीजें तो रखी रहती है, कभी लेने देने के काम आयेंगी। मुहल्ले भर की लड़कियां इसे घेरे रहती हैं। सबको नये-नये ढंग के स्वेटर और मोजे बुनना सिखाती रहती है। जाने कितनी ऊन जाड़ों में लायी और बना-बनाकर बाँटती गयी…"

रामनाथ टोककर बोले उठे—"ठीक है, ठीक है। माता-पिता का असर होता है न संतान पर।"

कैलाश की मां कहती गयी—"और खुद कुछ नहीं पहनती; चाहे कितना ही समझाओ। कहती है, जाड़ा ही नहीं लगता।"

रामनाथ बोले—"ठीक है, ठीक है। हमने कहा न, कुल का असर कहीं जा

सकता है ?.........वह तो होगा ही ?"

सुमित्रा अपनी बाबत बहुत बात चलती देख कर संकोच से उठ कर भीतर चली गयी। उर्मिला भी उसके पीछे चली गयी।

धर्मचंद की भाबी ने स्नेह से कहा—"बेचारी कितनी शर्मीली है ?"

रामनाथ कैलाश की मां से बोले—"यह तो होगा ही। भले लोगों की सन्तान भी तो भली ही होती है। भई माँ-बाप जिस ढंग पर चलेंगे, सन्तान भी तो वही रास्ता पकड़ेगी।"

हरप्रसाद बहुत प्रसन्न हो गये—"यह तो आप लोगों की गुणग्राहकता है। भगवान भला करे, वरना हम लोग किस लायक हैं ?" वे रामनाथ से आँखें चार हो जाने पर उनकी ओर जिज्ञासा से कुछ क्षण देखकर बोले, "पंडित जी, क्या इलाहाबाद आज ही चले जायंगे ? कुछ दिन तो ठहरते। आपके दर्शन से तो बड़ा आनंद हुआ।"

रामनाथ ने ज्ञानचन्द की ओर देखा—"हाँ, पर इन्हें फुर्सत ही कहाँ मिलती है ? बरसों बाद आ पाये है। हम तो कब से लिख रहे थे।" वे ज्ञानचन्द की ओर झुक गये, "पंडित जी, क्या विचार है ? क्या वहाँ जाकर से लिखियेगा ?"

ज्ञानचंद अपने घुटने पर दोनों पंजे दाबकर गंभीर हो गये—"हाँ, जाकर भी हो सकता है।" उन्होंने अपनी पत्नी की ओर देखा, "सभी बातें देखी जाती है न !" उनकी नज़र धर्मचंद की ओर गयी, "और भई इस जमाने में तो आप जानते हैं, पहले तोलड़कों से ही पूछना जरूरी होता है। हम लोगों की बात तो खैर उसके बाद ही हो सकती है, क्यों !"

कैलाश के पिता बारी-बारी से ज्ञानचंद और रामनाथ की ओर देखने लगे।

रामनाथ ने गर्दन हिलाकर स्वीकार किया—"पण्डित जी ठीक ही कह रहे हैं। बात तो असली लड़के की ही पसन्द की है पर भले घरों के लड़के भी अपने बड़ों के कहने के बाहर कैसे जा सकते है ? भाई, ऐसा सीधा लड़का नहीं देखा। बहुत भला स्वभाव है।"

हरप्रसाद ने सहमते हुए कहा—"जी हां, भगवान भला करे भाई साहब" उन्होंने ज्ञानचन्द की ओर संकेत किया, "ऐसे ही गुण पायेंगे और क्या ?"

रामनाथ ने बात आगे बढ़ाई—"और धर्मचन्द बाबू के तो आप ही लोग हैं। भाई-भाभी हैं तो और माता-पिता हैं तो।" गर्दन जरा सीधी कर वे गंभीर हो गये, "पण्डित जी, ऐसी बातें चिट्ठी पत्री से कहाँ चल सकती है? इन बातों में तो आमने-सामने बात हो जाना ही अच्छा रहता है। भले आदमियों में तो बात का ही मोल होता है।" उन्होने हरप्रसाद की ओर देखा, "क्यों अकाउन्टेंट साहब?"

धर्मचंद की भाबी अपने बोलने का अवसर समझकर सिर पर आंचल सम्भालते हुये कुछ आगे खिसक आयी—"देखिये, लड़का ही जब तक कुछ न कह दे!···उससे तो पूछना ही होगा न?"

हरप्रसाद ने संकेत समझा—"हा-हाँ कैलाश की माँ, पान नहीं लाईं लड़कियां?" उन्होंने कैलाश की ओर देखा, "बेटा, देखो तो जरा पान नहीं भेजे लड़कियों ने।"

कैलाश और चेतन दोनों उठ कर बाहर चले गये।

कैलाश की मां ने उठते हुए ज्ञानचन्द की स्त्री से कहा—"अभी आती हूँ बहिन जी।" वे आश्वासन देकर दायीं ओर से भीतर चली गयीं।

हरप्रसाद भी एक मिनिट कहकर उठ गये—"भगवान भला करे, अभी आया!"

भाबी ने आगे खिसक कर धर्मचन्द से पूछा—"कुछ कहो तो?" वे जरा मुस्करायीं।

धर्मचन्द ने सिर हिला दिया—"मैं क्या कहूँ?····आप लोग जो कहें!"

भाबी ने अपने पति की ओर देखा—"लड़की सुशील तो जरूर है, पढ़ी लिखी भी है ही, पर भई" उनका मुंह बन गया, "चेचक के दाग बहुत गहरे हैं।"

रामनाथ कुछ घबराये—"अब यह सब तो है ही लेकिन लड़की का गुण देखिये।" वे रहस्य के स्वर में बोले, "इसी वजह से तो इतनी रकम दे रहे है ये लोग। गुण की बात तो पण्डित जी, यह है कि ऐसी लड़की लाखों परिवारों में कहीं एक होती है!"

घर का नौकर चांदी की तश्तरी में पान दे गया।

ज्ञानचन्द बोले—"पर धर्मचन्द को पसंद भी तो हो!" उन्होंने रामनाथ की ओर देखकर पूछा, "लेन-देन की बात आप से क्या हुई है?"

रामनाथ ने हाथ उठाकर पंजा दिखाया—"पाँच हजार की बात मुझसे हुई थी। हरप्रसाद धर के पोढ़े हैं। दान-दहेज में कंजूसी करने वाले नही हैं।"

भाबी ने मुंह में पान रखते हुए कहा—"दान-दहेज तो चलता ही है। उसमें कोई ठहराव की बात थोड़े होती है पर ठहरावा भी तो देखा जाता है।"

रामनाथ ने ज्ञानचन्द के समीप खिसक कर रहस्य के स्वर में समझाया—"तुम पाँच हजार और दहेज पर मत जाओ। आदमी पैसे से नहीं जांचा जाता। पैसा तो हाथ का मैल है, पण्डित जी! आदमी का गुण बड़ी चीज होती है। लड़की एफ० ए० पास है। दो बरस में बी० ए० हो जायगी, बी० ए० ही समझो चाहे प्राइवेट कर ले! घर मे बी० ए० पास बहू का होना मामूली बात नहीं, पंडित जी! परमेश्वर के मन की बात कोई नहीं जानता। परिवारों में सब तरह के समय आते हैं। हां, बी० ए० पास बहू को घर में एक बी० ए० पास आदमी समझो।"

ज्ञानचन्द ने मुंह में भरे पान को सम्भालने के लिये मुंह ऊपर उठा लिया—"सो तो हम समझते हैं पंडित जी, पर भाई ठहराव की भी तो बात है।"

रामनाथ ने कहा—"सोचो कितना तो खर्च हो गया होगा उसकी पढ़ाई पर?" उन्होंने ज्ञानचन्द का हाथ थाम लिया, "समझे! तुम्हें तो बी० ए० पास आदमी मिल रहा है।"

भाबी ने कहा—"उसमें क्या है?........हमें कौन बहू से नौकरी करानी है?" उन्होने मुंह बिचका लिया, "चेहरा ऐसा है कि भई पांच हजार कम है। गुण तो हुआ, पर रूप भी तो कोई चीज होती है। गुण तो कोई कब देखेगा, पहिले तो लड़की का रूप ही देखेगा। नही तो घर बैठे इतनी उम्र कैसे हो गयी?....... लोग यही तो देखते होंगे। यह लोग अठारह की बता रहे हैं, बीस से कम नहीं है, ज्यादा चाहे हो। शर्त बदती हूँ!"

ज्ञानचन्द ने समर्थन में सिर हिलाया—"हाँ भाई, सभी कुछ देखा जाता है।"

भाबी पति का समर्थन पाकर बोली—"छोटी बहिन की बात होती तो हम कहते, पाँच हजार ही सही। बड़ी की शादी यूं ही थोड़े हो जायगी। हम तो दस से कम नहीं मानेंगे। सच्ची बात है!"

रामनाथ ने गहरा सांस लिया—"तो बात की जाय। लेन-देन की बात तो ऐसे ही तय होती है भाई। कुछ वे मानेंगे, कुछ आप कम करेंगे लेकिन लड़की में ऐसा गुण नहीं मिलेगा! खैर, बात तय हो जाय। इनकी भी चिंता मिटे और आप लोगों को भी निश्चय रहे।"

भाबी ने पति से कहा—"आप तो दस ही कहिये।"

रामनाथ ने हाथ से इशाराकर प्रतीक्षा का संकेत किया—"जो हरि इच्छा हो,···· आप लोगों में जो तय हो जाय। हम तो यह जानते हैं कि ईश्वर की कृपा से दो भले परिवारों का सम्बन्ध हो जाय, यही बड़ी बात है।" उन्होंने गर्दन ऊंची कर पुकार लिया, "उर्मिला बेटी!········ कैलाश बाबू!"

अपना नाम सुनते ही कैलाश तुरन्त आ गया। वह किवाड़ की ओट मे ही खड़ा था। उसके पीछे अपने दोनों बाजू सीने पर बाँधे चेतन भी साथ आ खड़ा हुआ। चेतन निचला होंठ दांत से दबाये था मानो अपने क्रोध को दबाये हो।

कैलाश ने रामनाथ की ओर देखा—"कहिये?"

रामनाथ पालथी मारे अपने दोनों घुटनों पर हाथ रख कर पीठ को सीधी करके बोले—"कैलाश बाबू, अकाउन्टेंट साहब को बुलाओ न भाई आज्ञा लें। बहुत देर हो गयी है।"

हरप्रसाद भी कमरे में आ गये।

कैलाश अपने पिता के आ जाने के कारण चुप रह गया।

हरप्रसाद जी पुराने स्थान पर बैठ गये और बोले—"अभी जल्दी क्या है? बैठिये तो।"

रामनाथ उनकी ओर सरक गये—"भाई साहब देखिये, और तो सब ठीक है पर पेशकार साहब का कहना है कि मतलब है कि··· लेन-देन की बात तो नहीं है परन्तु जैसा जग का व्यवहार है; हमारे लिये तो जैसे आपका घर है, वैसे इनका घर है।········वैसे तो वह दस हजार कहते हैं।" उन्होंने विवशता प्रकट करने के लिये दोनों हाथ फैला दिये।

हरप्रसाद का चेहरा उतर गया। उनकी आँख और होंठ खुले रह गये और हाथ ढीले पड़ गये।

कैलाश ने चेतन को कुहनी से संकेत किया।

चेतन ने उसकी ओर देखकर उसी प्रकार कुहनी से संकेत किया—मानों कह रहा हो पहले तुम।

हरप्रसाद ने एक गहरी साँस ली। घुटने पर रखी कोहनी की हथेली पर चिन्ता में अपना सिर टिका लिया—"भगवान भला करे।..."

कैलाश आगे बढ़कर क्रोध में बोल उठा—"दस हजार किस बात के ? ...... लड़की को पसन्द करने का दाम मांग रहे हैं आप ? .. क्या आपको लड़की के कुरूप होने का हर्जाना चाहिये ?"

सब लोग भौंचक कैलाश की ओर देखने लगे।

सुमित्रा सहसा किवाड़ के पीछे से कमरे मे आकर कैलाश के सामने खड़ी हो गयी।

सुमित्रा ने किसी की ओर न देखकर सिर झुकाये परन्तु कड़े स्वर में कहा—"आप लोग मेरी कुरूपता का हर्जाना ले कर मुझे पसन्द कर लेना चाहते है ? परन्तु मुझे तो लड़का पसन्द नही है।"

सभी लोग विस्मय में आंखे खोले और मुह बाए रह गये। सुमित्रा एक ओर हट कर खड़ी हो गयी। ज्ञानचन्द, रामनाथ, धर्मचन्द और उसकी भाबी सब उत्तेजना मे खड़े हो गये।

कैलाश के पिता सुधबुध खोये बैठे रहे।

ज्ञानचन्द, उनकी स्त्री, रामनाथ और धर्मचन्द के चेहरे क्रोध से फूल गये।

ज्ञानचन्द रामनाथ और हरप्रसाद की ओर देखकर क्रोध मे बोले—"हमारा इस प्रकार अपमान करने के लिये ही आप लोगो ने हमे बुलाया था ?"

चेतन आगे बढ़कर बोल उठा—"इसमें आप लोगों का कोई अपमान नहीं है। आप ही लड़की को पसन्द करेगे ? लड़की नहीं लड़के को पसन्द करेगी ? आप लड़की के चेचक के दागों के कारण कुरूपता का हर्जाना मागते हैं तो इस घर का अपमान नही है। लड़की आपको कुरूप जान पड़ती है। लड़की को लड़का बेवकूफ मालूम होता है।"

रामनाथ ने क्रोध में धमकाया—"तुम कौन हो बीच मे बोलने वाले ?"

कैलाश आगे बढ़ आया—"इन्हें इस घर की तरफ से सब कुछ कहने का अधिकार है। यह मेरे बड़े भाई है!"

ज्ञानचन्द क्रोध में पाँव पटककर चुनौती में हाथ उठाकर बोला—"तुम लोगों ने हमारा जो अपमान किया है, इसका वह बदला दूँगा" उसने मूंछों पर हाथ फेरा, "सात पीढ़ी में भी अगर इस घर की लड़कियों की शादी कहीं हो जाय तो मेरा नाम ज्ञानचन्द नहीं...."

कैलाश आस्तीनें चढ़ाने लगा—"चुप, जबान सम्भालो !"

चेतन ने कैलाश को बांह से पीछे खींचकर ज्ञानचन्द को हाथ से बराम्दे की ओर संकेत किया—"गेट आउट ! इस घर की लड़कियों की बाबत एक भी शब्द कहा तो जबान खींच ली जायगी ! ...लड़कियों के बापों का खून पीने वालो, तुम्हारी खबर ऐसी लड़कियां ही लेंगी।"

रामनाथ ने बराम्दे की ओर बढ़ते हुए धमकाने के लिये उंगली दिखाई—"याद रखना, हरप्रसाद !......"

ज्ञानचन्द, धर्मचन्द, रामनाथ और ज्ञानचन्द की स्त्री पाँव पटकते हुए चले गये।

कैलाश की माँ परेशानी की अवस्था में कमरे में आ गयी।

कैलाश की माँ ने हाथ और मुँह फैलाये गहरी सांस से पूछा—"क्या हुआ ? हाय राम जी, क्या हुआ ? वे लोग क्यों चले गये ?" उसने दोनो हाथ सिर पर मार लिये, "हाय मेरी लड़की का क्या होगा ?"

हरप्रसाद मानसिक आघात की मूर्छा से जागे और बाहें फैलाकर दरवाजे की ओर लपकते हुए चिल्ला उठे—"भाई रामनाथ जी ! अरे पंडित जी ! ओ पेशकार साहब ! अरे सुनिए !"

कैलाश ने पिता के सामने आकर रास्ता रोक लिया—"यह क्या कर रहे है आप ?"

हरप्रसाद और भी ऊंचे स्वर मे पुकारने लगे—"पंडित जी ! रामनाथ जी ! पंडित ज्ञानचंद जी !"

कैलाश ने पिता को डांटा—"क्यों आप अपनी बेटी का और अपना अपमान कराना चाहते हैं ?"

हरप्रसाद ने सिर पर हाथ मार लिया, चीखकर बोले—"तुम लोगों ने सर्वनाश कर डाला ? मैं क्या सारी उमर लड़कियों को अपने सिर पर बैठाये रखूंगा ?....कैसा कपूत मेरे घर में पैदा हुआ है जिसने मेरा लोक-परलोक बिगाड़ दिया।......"

कैलाश ने तीखे स्वर में डांटा—"सिर पर बैठा रखने का क्या मतलब ?.... क्या आपकी लड़की का अपमान करने वाले का पेट अपने खून से भरने से, लड़की को कुरूप बता कर हर्जाना माँगने वाले को खुश करने से आपका धर्म पूरा होगा ?.. किस बात के दस हजार रुपये मांगता है वह ?....रुपया मिल जाने से लड़की खूबसूरत हो जायगी ? रुपया हजम करके वे लोग लड़की से क्या बरताव करेंगे ?"

हरप्रसाद भर्राये हुए गले से चिल्ला उठे—"रुपये के लालची ! तुझे रुपये की फिकर है ? रुपये के लोभ में तूने दरवाजे पर आए लड़की के वर को ठुकरा दिया ?" उन्होने धमकी देने के लिए मुट्ठी उठा ली, "कौन है तू मेरी सम्पत्ति के बारे में बोलने वाला ? मैं घर में आग लगा दूंगा ! याद रख, यह मेरी कमाई है। मैं दस हजार नहीं, बीस हजार दूंगा ! मैं मकान बेच कर लड़की का ब्याह करूँगा। रुपये के लालची, तूने रुपये के लोभ में मेरा लोक और परलोक बिगाड़ दिया। निकल जा मेरे घर से !" उन्होंने दरवाजे की ओर संकेत कर दिया। वे क्रोध से काँप रहे थे।

कैलाश प्रत्युत्तर की उत्तेजना में बोला—"मैं लात मारता हूँ आपकी सम्पत्ति पर, आपके मकान पर ! सुमित्रा मेरी बहिन है। जो उसका अपमान करके, इस घर का कूड़ा समेटने के लिये, इस घर का पाप धोने के लिए हरजाना माँगेगा, उसे इस घर में पांव नहीं रखने दूंगा।" वह और भी क्रोध में बोला, "यदि सुमित्रा इस घर को भारी है तो वह भी मेरे साथ जायेगी। हम मजदूरी करके अपना पेट पाल लेंगे परन्तु मैं अपनी बहिन का अपमान नही होने दूंगा। चल बहिन..."

सुमित्रा झपट कर कैलाश के सामने आ गयी। उसकी आँखे क्रोध से लाल थी और शरीर काँप रहा था।

सुमित्रा कड़े स्वर में बोली—"भैया को घर से निकालने की क्या जरूरत है ? मैं इस घर के लिये इतना बोझ हूँ, मैं स्वयं इस घर में नही रहूँगी।"

हरप्रसाद ने दोनों हाथों से सिर पीट लिया—"तुम सब मुझे मार डालो ! मुझे पाप में घसीटना चाहते हो। तुम मेरे घर में कुवाँरी लड़की बैठाये रख कर मुझ नरक में घसीटोगे। तुम्ही लोग रहो इस घर मे। मैं

इस घर को लात मारता हूँ। इस घर को आग लगाता हूँ। मैं ही इस घर में नहीं रहूँगा। तुम लोगों ने मेरी औलाद होकर मेरे साथ जो अन्याय किया, भगवान तुमसे समझेगा ! लो, तुम्ही रहो ! मैं जाता हूँ ..."

हरप्रसाद दरवाजे की ओर बढ़ गये।

कैलाश की माँ सिर पीट कर चिल्ला उठी। उसने लपक कर पति के कुर्ते का आंचल पकड लिया—"हाय राम जी, क्या हो गया सब को !" उसने पति को पुकारा, "कहाँ जा रहे हो तुम ! मेरा घर उजाड़ने वालो तुम्हारा नास हो।"

चेतन हरप्रसाद के सामने आकर गम्भीर परन्तु ऊँचे स्वर में बोला —"आप यह क्या कर रहे हैं ? ···जो आपकी लड़की का अपमान करे, क्या वही आपकी लडकी का वर हो सकता है ? जो रुपये के लालच में आपकी लड़की का निरादर करे वही आपकी लडकी का वर हो सकता है ? जो आपकी लड़की का देवी के समान आदर करे, उस पर श्रद्धा करे, व···वह···उसका वर नहीं हो सकता ?"

कैलाश के पिता और माँ विस्मय से स्तब्ध आँखें और हाथ फैलाये एक दूसरे की ओर देखने लगे। कैलाश चेतन की बात समझने के लिये उसकी ओर एक कदम बढ़ आया। अपने स्थान पर खड़ी सुमित्रा ने विस्मय से उसकी ओर देखा परन्तु उसकी कठोर मुद्रा में कोई परिवर्तन नहीं आया।

कैलाश ने गहरा सांस लिया—"क्या कह रहे हो ? किस वर की बात तुम कर रहे हो ?"

चेतन ने अपने सीने की ओर संकेत कर कैलाश की ओर देखा —"अगर आप लोग मेरी धृष्टता क्षमा करें" उसका स्वर लड़खड़ा गया मैं, "मैं चाहता हूँ···म-मेरा मतलब है ·· ····मैं····मैं नहीं कहता कि मैं उसके लिये उचित वर हूँ परन्तु परन्तु" उसने दोनों हाथ आपस में मले, "परन्तु यदि आप समझें तो मैं उसे अपना सौभाग्य ·· ··समझूंगा।"

विस्मय के धक्के से कैलाश की उत्तेजना शिथिल हो गयी। उसने गहरा सांस लेकर प्रश्न की दृष्टि से सुमित्रा की ओर देखा।

सुमित्रा का क्रोध और भी उग्र हो गया। उसके माथे पर बल पड़ गये। उसने एक कदम आगे बढ़, हाथ की मुट्ठी से हवा में प्रहार करके चेतन को सम्बोधन किया—"अब आप मुझ पर दया दिखाना चाहते है ?....मुझे किसी की दया की आवश्यकता नहीं है।"

सुमित्रा ने आँसू रोकने के लिए क्रोध में होंठ काट लिये। सब लोग विस्मय से सुमित्रा की ओर देखते हुए अवाक रह गये।

चेतन ने सुमित्रा की भर्त्सना से अविचल रह कर उसकी ओर देखा और द्रवित लड़ाखड़ाते हुए स्वर में बोला—"मैं .. मैं तुम्हारा अपमान नहीं कर रहा हूँ। मै....मैने अपने मन की इच्छा और गौरव की बात कही है। मैं....मैं .. उसके लिये क्षमा चाहता हूँ।... मै तुम पर दया नही कर रहा हूँ।....मैं तुम्हारी दया से...... अपने जीवन को बनाना चाहता हूँ।"

चेतन ने कैलाश की ओर देखा—"तुम जानते हो, मै इनका कितना आदर करता हूँ। जो इन्हें कुरूप कहते हैं, वे झूठ बोलते हैं। वे अंधे है..."

सुमित्रा होंठ काट कर बोल उठी—"आप झूठ बोलते है। मै जानती हूँ. मै कुरूप हूँ। दुनिया जानती है, मैं कुरूप हूँ।" उसने प्रश्न की मुद्रा में हाथ उठाया, "क्या सारी दुनिया झूठ बोलती है ? आप ही सच्चे है ? आप झूठे हैं। मुझे कुरूपता का कोई डर नहीं है, कोई लज्जा नहीं ! मै सुन्दर खिलौना नहीं हूँ !"

चेतन गम्भीर और स्थिर हो गया—"दुनिया ? दुनिया खिलौना ढूंढ़ती है। मैं इन्सान का आदर करता हूँ।... दुनिया के लोग तुम्हें देख नही पाये। वे जिस आँख से देखते हैं, वह आँख ही टेढ़ी है। मेरी आँखों पर दहेज के लोभ की पट्टी नहीं बँधी है इसलिए मैंने तुम्हें देखा है और पहचाना है। मै उस ज्योति का आदर करता हूँ।"

सुमित्रा का शरीर काँप उठा। उसने दोनों हाथों से चेहरा ढक लिया। लड़खड़ाती हुई अपने स्थान से चेतन की ओर दो कदम बढ़ आयी। आँसू भरे गले से बोली—"आप तो झूठ नही बोलते थे।... मैं सदा आपका विश्वास करती रही हूँ।...आप ऐसी बात न कहिये !.... मुझे ऐसे ही रहने दीजिये !" वह मुंह ढांप कर दीवार के समीप चली गयी।

कैलाश आश्वासन देने के लिए सुमित्रा के समीप हो गया। उसका कन्धा छू कर बोला—"सुमित्रा ! सुमित्रा ! ...... सुनो ! ...क्या कहे जा रही हो ? ......घबराती क्यों हो ? ..... तुम जानती हो, चेतन भाई झूठ नहीं बोलते।"

मां जैसे मूर्छा से जागी। पति को सम्बोधन कर बोली—"एजी ! ... क्या हो गया तुम्हें ? .... क्या कहते हो ?" पति से उत्तर न पाकर उन्होंने गाल पर उँगली रख सब की ओर देखा।

हरप्रसाद मूढ़ता से जागे। गहरा साँस लेकर सुमित्रा की माँ की ओर देखा—"हाँ ? ...क्या कहती हो मित्रा की मां ? ..... भगवान भला करे, अच्छा" उन्होंने चेतन को सम्बोधन किया, "भैया, तुम लोग कौन ब्राह्मण हो ?"

(पटाक्षेप)

गुडबाई दर्दे-दिल

एकांकी नाटक

अथवा

दृष्य कहानी

पात्र

सड़क पर

आठ रिक्शा कुली—कोई कुली फटा-पुराना कमीज या बन्डी पहने है, कोई कम्बल की गाती बाँधे है। सिरों पर दबी और चिपकी हुई काली टोपियाँ हैं। कुलियों के पसीने से भीगे चेहरों पर धूल जमी है। पिंडलियाँ पर नसें तनी हुईं और पसीनें की धारे बह रही हैं।

रणजीत—विलायत से लौटा हुआ शशि का प्रेमी है। आयु लगभग छब्बीस वर्ष। टैनिस का खेल खेलने के बाद अपने मित्र केशव के साथ शशि के बंगले पर ब्रिज की पार्टी में सम्मिलित होने के बहाने शशि से मिलने जा रहा है। गहरे हरे रंग का फलालेन का ब्लेजर कोट, गले में सफेद रेशमी मफलर, सफेद फलालेन की पतलून और सफेद जूते पहने है। हाथ में टैनिस का बल्ला है। वर्षा की आशंका में बरसाती-कोट भी साथ में है।

केशव—रणजीत का समवयस्क मित्र। उसके ब्लेजर कोट का रंग गहरा कत्थई है।

प्रौढ—आयु प्रायः पचपन वर्ष। शिक्षित, सम्भ्रांत आर्यसमाजी सज्जन का सा वेश। चेहरे पर सहृयता और दया का भाव।

शर्मा—अपने मित्र से बात करता सड़क पर चला जाता युवक। उसका विश्वास गांधीवादी मानवता में है। वह खद्दर का कुरता-धोती पहने और शाल ओढ़े है।

वर्मा—बेपरवाही से कोट, पतलून पहने, बिना नेकटाई और टोपी के है। उसकी विचारधारा और स्वभाव उग्र है।

अन्य पात्र—सड़क पर आते-जाते कुछ लोग और बोझ उठाये गुजर जाने वाले दो कुली। इन पात्रों का नाटक की घटना और वार्तालाप से कोई सम्बन्ध नहीं। केवल दृश्य पूर्ति के लिये हैं।

बंगले में

वृद्ध—शशि और लीला के पिता। सम्पन्न मध्यमश्रेणी के अवसर प्राप्त ऊंचे सरकारी अफसर। आयु लगभग पैंसठ वर्ष।

शशि—अध्ययनशील, गम्भीर, अत्यन्त भावुक, नाजुक युवती। आयु लगभग बाइस-तेइस वर्ष।

लीला—शशि की छोटी बहिन। आयु लगभग अठारह-उन्नीस वर्ष।

नवयुवक—यूनिवर्सिटी की ऊंची श्रेणी का छात्र। शशि के परिवार से हिला-मिला या निकट सम्बन्धी।

गुडबाई दर्दे-दिल

पर्दा उठता है

संध्या, लगभग पाँच बजे का समय है।

मंसूरी की एक खूब ढलवां सड़क। सड़क के दायीं ओर एक सीधी चट्टान दीवार की तरह खड़ी है। दूसरी ओर काफी गहराई है। सड़क पर बहुत सी रिक्शाओं के ऊपर नीचे गुजर जाने से गहरी रेखायें बनी हुई हैं।

सड़क पर ढलवान की ओर आने वाले लोग खूब तेजी से, लुढ़कते से चले आ रहे हैं और चढ़ाई की ओर जाने वाले हाँफते हुए, धीरे-धीरे चल रहे है। पीठ पर भारी बोझ उठाये कुली झुके हुए, बहुत धीमे-धीमे छोटी लठिया का सहारा लिये ऊपर चढ़ रहे हैं। उनकी तनी हुई पिंडलियों पर पसीने की धाराएँ चमक रही हैं।

कुलियों द्वारा खींची जाने वाली पहाड़ी रिक्शाओं की घन्टियों की आवाजे और रिक्शा-कुलियों की पुकारें भी सुनाई देती हैं :

"बचके बाबू साब !···बचो बाबू साब !···रोक के !······अबे, जोर लगाओ !"

सड़क पर एक रिक्शा आती है। रिक्शा की चाल चढ़ाई के कारण बहुत धीमी है। रिक्शा मे दो युवक केशव और रणजीत सवार हैं। उनके फलालेन के रंगीन कोटों, सफ़ेद पतलूनों, सफेद जूतों और हाथ में टैनिस के बल्लों से वे टैनिस के खेल से लौटते हुए खिलाड़ी जान पड़ रहे हैं।

एक बार फिर कुलियों की झुंझलाहट भरी पुकारें सुनाई देती हैं।

एक कुली—"बचके बाबू साब !"
दूसरा कुली—"दाने ! दाँय से जोर लगा बे !"
तीसरा कुली—"मैं तो लगा राऊं, देख !"
केशव झुंझला कर बोला—"यार रणजीत, उतर जाओ। छोड़ो इस रिक्शा को। इससे जल्दी तो पैदल पहुंच जाते।··· इनका रिक्शाखराब है। यह लोग नहीं खेंच सकेंगे।"
रणजीत ने उठने के लिए तैयार साथी की बाँह पकड़ कर रोक लिया—"नहीं यार; तुम बैठो।" उसने क्रोध के स्वर में कुलियों को सम्बोधन किया "ऐ कुली ! तुम चलता क्यों नही ? तुम क्या तमाशा करता है ?"
एक कुली ने कातरता से क्षमा सी मांगी—"हजूर, जोर लगाता है। बौत सकत ऊँचा है। चराई मे हजूर ऐसाई जाता है।"
केशव ने फिर खिन्नता प्रकट की—"भई रणजीत मान जाओ !···हटाओ इस झगड़े को !·· वहुत बुरा मालूम हो रहा है।"
रणजीत ने समझाया—"नहीं केशव, सोचो जरा।······पार्टी में जा रहे है। उस सड़क पर बहुत धूल है। धूल मे जूते और पैन्ट सभी खराब हो जायंगे।···अभी पहुँचे जाते हैं।" वह फिर कुलियों की ओर घूम गया—"एई कुली, क्यों तुम जल्दी नही चलता है ?······ हम अभी उतर जायगा। क्यों तुम इतना कमजोर आदमी लाता है ?··· देखता नहीं, दूसरा सब रिक्शा आगे चला गया !"
केशव ने भी अपने साथी का समर्थन किया—"अरे ओ कुली ! क्या बदमाशी करता है तुम ? जोर क्यों नहीं लगाता तुम लोग ?"

कुली हाँफ गये थे। फिर भी उन्होंने एक साथ मिल कर जोर लगाया। रिक्शा झटके से दो कदम बढ़ा परन्तु सहसा दांयीं ओर घूमकर चट्टान से टकरा गया। दायीं ओर का कुली सड़क पर गिर पड़ा। रिक्शा झटके से सामने झुक गया।

रणजीत के मुंह से घबराहट में निकल गया—"अरे ! यह क्या ! क्या हुआ ?" वह रिक्शा से सड़क पर कूद गया।
केशव भी रिक्शा से सड़क पर हो गया—"हैं; कुली गिर गया ?" उसने कुलियों को सम्बोधन किया—"अरे, देखो ! देखो, क्या हो गया इसे ?"

वह चोट खाये कुली को देखने के लिए आगे बढ़ गया परन्तु गन्दी चीज छू जाने के डर से ठिठका रहा ।

गिरे हुये कुली को अन्य तीनों कुलियों ने घेर लिया ।

एक कुली सिर थामकर विलाप के स्वर में चिल्ला उठा—"हाय राम ! मेरा बाई मर गिया !" वह बिलख उठा ।

दूसरे कुली ने उसे सान्तवना देने के लिए हाथ से संकेत किया—"नइ, नइ; गबरा नइ । कुच नइ है । बेहोस हो गिया है । देख तो, साँस चलता है ।" उसने तीसरे कुली को सम्बोधन किया—"ओ रमिया, तू जा जल्दी, नल से पानी ला ।"

रमिया ने विवशता में खाली हाथ दिखा दिये —"कैसे लायगा ? लोटा भाँड़ा तो नइ ए ।"

दूसरे कुली ने अपने सिर से टोपी उतार कर कटोरे की तरह थमाकर कहा—"जा, जा, इसमें पानी ले आ । लाकर पानी पिला इसे !"

रणजीत और केशव बात करने के लिए चोट खाये हुए कुली से दो कदम दूर हट गये ।

रणजीत ने खिन्न स्वर में कहा—"ओह, ह्वाट-ए मैस्स ? क्या मुसीबत हो गयी ! अब क्या होगा ? यहाँ रिक्शा कैसे मिलेगी ? हाओ शैल वी रीच ? पहुँचेंगे कैसे ? ह्वाट स्काउन्ड्रल्स ? बहुत बदमाश हैं यह लोग ?" उसने चिंता का गहरा श्वास लिया—"अब क्या होगा ?"

केशव ने उत्तर दिया—"मैं कहता हूं, पैदल ही चले चलो ।"

रणजीत ने विस्मय प्रकट किया—"पैदल कैसे!" उसने रिक्शा में पड़े बरसाती कोटों और बल्लों की ओर सकेत किया—"यह सब बोझा कौन उठायेगा ? जस्ट वेट ! तुम प्रतीक्षा करो ।" उसने पानी लेने के लिये जाते हुए कुली को पुकारा—"ऐ कुली; किधर जाता है ?"

कुली ने उत्तर दिया—"हजूर, साथी गिर गिया, उसके लिए पानी लेने जाता !"

रणजीत ने क्रोध प्रकट किया—"वह सब फिर होगा । पहले तुम हमारा वास्ते एक रिक्शा लायगा ।"

केशव ने उसे टोका—"क्या करते हो रणजीत ? जब तक रिक्शा आयगी, हम कोठी पर पहुँच जायंगे ।"

एक खाली रिक्शा उतराई की ओर आती दिखाई दी।

रणजीत रिक्शा को रोकने के लिए सड़क के बीच में हो गया और हाथ उठाकर बोला—"स्टाप, स्टाप! रोको, रोको!" उसने उंगली से गोलाई में संकेत किया—"पीचू; पीचू को गुमाओ,"

नीचे आती हुई रिक्शा के कुलियों ने अपनी रिक्शा को रोककर चढ़ाई की ओर घुमा लिया।

रणजीत ने गिरी हुई रिक्शा की ओर संकेत करके आदेश दिया—"सामान उठायेगा! अमारा सामान ऊटाओ!"

दूसरी रिक्शा में सामान रख लिया जाने पर रणजीत और केशव उस रिक्शा में बैठ गये। रिक्शा चलने लगा।

पहली रिक्शा के कुली अपने चोट खाये साथी को छोड़ इस रिक्शा की ओर आ गये।

कुलियों ने रणजीत और केशव को पुकारा—"हजूर, हमारा किराया?"

रणजीत खिन्नता से कुलियों की ओर घूम गया—"तुम्हारा कैसा किराया? तुमने हमको रास्ता में चोड़ा हमारा टाइम खराब किया। कोई किराया नहीं, जाओ?"

रणजीत और केशव रिक्शा में चल दिये। पहली रिक्शा का एक कुली किराया माँगता हुअ। उनके पीछे-पीछे चला गया।

चढ़ाई की ओर पैदल जाने वाले दो युवक शर्मा और वर्मा और नीचे की ओर से जाने वाले एक प्रौढ़ गिरे हुए कुली को देखकर रुक गये और उसके समीप जाकर खड़े हो गये।

शर्मा ने चोट खाये हुए कुली की ओर संकेत कर उसके समीप बैठे कुली से पूछा—"क्यों, इस आदमी को क्या हो गया?"

कुली ने उत्तर दिया—"हजूर गिर गिया।" कुली ने अपने सीने की ओर संकेत कर बताया, "दम फूल के गिर गिया।"

वर्मा ने प्रकट उपेक्षा से कहा—"कोई नई बात नहीं है। यह तो रोज़ होता

है ।....क्या किया जाय ?....आदमी पशु की तरह बोझ खींचेगा तो और क्या होगा ।"

प्रौढ़ चिंता से चोट खाये हुये कुली के समीप बैठ कर बोला—"इसका साँस तो चल रहा है । देखो, इसके मुंह में पानी डालो ।" झुककर देखने से उन्हें विस्मय हुआ, "ओह; इसके मुंह से खून कैसे आ रहा है ?"

कुली ने बताया—"हजूर पत्तर लग गिया ।"

प्रौढ़ ने चिंता से पूछा—"पत्थर ?....किसने मारा पत्थर ?"

वर्मा ने उपेक्षा दिखाई—"हम आप सभी लोग इन्हें मारते है ?"

कुली ने हाथ के संकेत से इंकार किया—"किसी ने नइ मारा हजूर । किस्मत का बात है । जोर से गाड़ी खेंचता, पाँव भी पिसल जाता ।"

प्रौढ़ ने अपने सूखते होंठ चाट कर कहा—"यही तो तुम लोग समझते नहीं । इतनी जल्दी क्यों करते हो ?"

शर्मा ने करुणा से कहा—"तुम गाड़ी क्यों खींचता है ? गाड़ी खेंचना जानवर का काम है । तुम आदमी है ।"

वर्मा मुस्करा दिया—"यह इनका धर्म है । इसी धर्म के लिये इन लोगों ने जन्म पाया है । दीन का धर्म सम्पन्न की सेवा है । इस धर्म के पालन से इन्हें स्वर्ग मिलेगा ।"

कुली ने कुछ न समझकर अपनी बात कही—"हजूर, पेट का वास्ते !"

शर्मा ने पूछा—"पेट भरने के लिए क्या और काम नहीं है ?"

कुली ने विवशता दिखाई—"कुछ भी नइ है हजूर, अम क्या करेगा ? खेती के लिए जमीन तो बौत तोरा है । रुपिया नई और क्या करेगा ?"

वर्मा ने उत्तेजित होकर शर्मा से पूछा—"बोलो, और क्या कर सकता है यह ? समाज ने इसे परवशता से घेर कर इसी काम के योग्य बना दिया है । भागवानों के लिए सेवकों की आवश्यकता है । अपना बस चलते कोई अपनी पीठ पर किसी को क्यों चढ़ने देगा ? यह कुली पशु से सस्ता है । सवारी करने के लिए पशु को रोज खिलाना होगा ; सवारी करो या न करो । ऐसे लोगों को जरूरत के समय पुकार लिया जा सकता है । दो घन्टे जिंदा रहने के दाम देकर इन पर सवारी की जा सकती है । फिर इन्हें भूखा मरने के लिए छोड़ देने में अपनी कोई हानि नहीं है ।"

शर्मा ने खिन्नता से कहा—"क्या बक रहे हो ? मनुष्य के बारे में ऐसी बात

कहते तुम्हें लज्जा नहीं आती ? अपनी इसी हृदयहीनता को समाजवाद कहते हो ?"

वर्मा विद्रूप से हँस दिया--"तुम बहुत समझदार हो। यदि मैं पीटे जाने की शिकायत करूँ तो तुम मुझ पर मार-पीट की बात करने या हिंसा की चर्चा का इलजाम लगा सकते हो। क्यों, यही है न अहिंसा का मार्ग ?"

प्रौढ़ उन दोनों की बात में बोल उठे--"अरे भाई, इस समय बहस की अपेक्षा" उन्होंने चोट खाये हुए कुली की ओर संकेत किया--"इसकी कुछ सहायता करना ही अच्छा होगा। इसे अस्पताल क्यों नहीं पहुँचा देते आप लोग ? शायद बच ही जाय। चोट खतरनाक नहीं मालूम होती।" उन्होंने वर्मा को सम्बोधन किया--"इसे कुलियों से उठवा कर अस्पताल पहुंचवा दो भाई।"

वर्मा ने पूछा—"अस्पताल ?·······अस्पताल ले जाऊं ?··· किस अस्पताल में ले जाऊँ ?"

प्रौढ़ बोले—"किसी भी अस्पताल में ले जाइये। सरकारी अस्पताल में या सेवा समिति के अस्पताल में ही ले जाइये। बेचारे की कुछ दवा दारु होनी चाहिये।"

वर्मा ने सिर झटक दिया--"ओ हो, मेरा यह मतलब नहीं। आप समझे नहीं···

शर्मा चिड़कर बोला—"तो क्या पूछ रहे हो ?"

वर्मा समझाकर बोला--"मैं यह पूछ रहा हूँ कि इसे इन्सानों के अस्पताल में ले जाऊँ या हैवानों के ? मुझे तो डर है। दोनों ही अस्पताल इसका इलाज करने से इन्कार कर देंगे।"

शर्मा को क्रोध आ गया - "वर्मा, तुम्हें शर्म नहीं आती ? इन्सान का मजाक करते हो। तुम मजदूर-किसान के राज के समर्थक बनते हो ? याद रखो ! दरिद्र 'नारायण' का रूप है। दरिद्र की सेवा से ही नारायण प्रसन्न होते हैं। दरिद्र भगवान के चलते फिरते मंदिर हैं।"

वर्मा हंस दिया—"तो फिर इन मन्दिरों को खूब बढ़ने दो ! इन मन्दिरों की पवित्रता नष्ट करने की क्या आवश्यकता है ?"

प्रौढ़ करुणा भरे स्वर में वर्मा से बोले—"भैया, इनसान के दिल में इनसान के लिए दर्द होना ही धर्म है। यही इनसानियत है। शायर का कौल है—

दर्द दिल के वास्ते पैदा इन्सान को,
वर्ना तायत के लिए कम न थे कुर्रोबया ! *

वर्मा फिर हंस दिया—"दरिद्र के लिए दर्द-दिल ? खूब !" उसने भवें ऊंची कर पूछा—"दरिद्र की सेवा, उस पर दया करने का मतलब क्या है ? इसका मतलब है, दरिद्र को अपनी सेवा के लिए जिन्दा रखने की समझदारी ! दरिद्र के प्रति दर्द-दिल दिखाने का मतलब है, दरिद्र को उसके दुर्भाग्य में ही बहलाये रखने की चतुरता ! मैं ऐसी सहृदयता और दर्द-दिल को दूर से हाथ जोड़ता हूँ।"

शर्मा ने बहुत धृणा से कहा—"तुम मनुष्य की सहृदयता समाप्त कर समाज में हिंसा और संघर्ष का सर्वनाश फैला देना चाहते हो ? यही है न तुम्हारी श्रेणीसंघर्ष की भावना ?"

वर्मा ने चुनौती स्वीकार करने के लिये हामी भरी—"यदि दरिद्रों का हिंसा और शोषण से विरोध करना, आत्मरक्षा की बात सोचना ही तुम हिंसा समझते हो तो लाचारी है। अच्छा होता, दरिद्र तुम्हारी दया को ठोकर मार अपने बल पर जीने या मर जाने की बात सोचते ! वे भागवानों के दर्द-दिल पर न पलते ! दर्द-दिल के इस धोखे को मैं हाथ जोड़ता हूँ।"

शर्मा को और भी क्रोध आगया—"तुम चाहते हो कि स्वामी-सेवक में सत-युग का पिता-पुत्र का भाव मिट जाये। वे एक दूसरे के खून के प्यासे बन जायें ?"

वर्मा ने स्वीकार किया—"हां, मैं चाहता हूँ, नगर के सब द्ररिद्र आयें और अपने स्वामी पिताओं की यह दया देखें। वे देखें, भागवानों में कितना दर्द-दिल है ! भागवान दरिद्र को पेट पालने का अवसर देने के लिये उसकी सवारी करता है और जब बोझ से दरिद्र का शरीर दम तोड़ने लगता है तो भागवान दर्द-दिल से उसे इलाज के लिये धर्मार्थ-औष-धालय में पहुँचाने की बात करता है। ऐसे दर्द-दिल को मैं कहता हूँ, अलविदा दर्ददिल ! बिदा हो दर्द-दिल ! गुडबाई दर्द-दिल !"

प्रौढ़ व्यर्थ बकवास से खिन्न हो गये—"तो क्या आप लोगों की बहस में यह बेचारा कुली यों ही दम तोड़ देगा ?"

---

* भगवान की महिमा प्रकट करने के लिये तो नक्षत्र ही पर्याप्त थे।

वर्मा ने आश्वासन दिया—"नहीं, यह योंही क्यों दम तोड़ेगा। अभी इसे बहुत भागवानों की सवारी बनना है। चलिये" वर्मा कुली को उठाने को झुक गया। उसने दूसरे कुलियों को पुकारा—"साथी आओ, मैं कंधे से उठाता हूँ, तुम कमर में हाथ लगाओ, तुम घुटनों से पकड़ो।··· इसे रिक्शा में लिटाओ इसको हस्पताल ले चलें!"

सब मिलकर कुली को उठाने का उपक्रम करने लगे।

(पटाक्षेप)

दूसरा दृश्य

संध्या; लगभग छः बजे का समय।

एक छोटे बंगले के सामने लान में चाय की तिपाई के चारों ओर लगी कुर्सियाँ हैं। एक कुर्सी पर एक वृद्ध शाल से शरीर को ढके प्याले से धीमे-धीमे चाय के घूंट ले रहे है। उनके समीप दूसरी कुर्सी पर एक बीस-बाइस बरस का नवयुवक चाय पी रहा है। तीसरी कुर्सी पर वृद्ध की अठारह-उन्नीस बरस की लड़की लीला प्रतीक्षा में बंगले की ओर आँखें उठाये है। चाय पीने के लिए वह अपनी बड़ी बहिन की राह देख रही है।

वृद्ध और युवक में समय काटने के लिए व्यायाम के सम्बन्ध में बात चल रही है।

बंगले से ग्रामोफोन पर रिकार्ड बजने की ध्वनि और बीच-बीच में ब्रिज की बैठक में होने वाली बातें भी सुनाई दे रही हैं।

बंगले से ऊंची आवाज सुनाई देती है :

"वाह, पान के चार तुमने कैसे कह दिया ? सिर्फ ढाई सरों पर ?"

"पान के चार बिलकुल बन रहे थे ! खेलना भी जानते हो ?"

वृद्ध ने चाय का घूंट भरकर कहा--"व्यायाम चीज तो अच्छी है बल्कि आवश्यक है परन्तु व्यायाम ऐसा होना चाहिए कि नियमित रूप मे किया जा सके। सुनो, लम्बी सैर सबसे अच्छा व्यायाम है।"

नवयुवक ने असन्तोष से कहा--"बाबू जी, चलने में क्या व्यायाम ? मुझे तो तीन-चार मील चलने से कुछ मालूम ही नहीं होता।"

वृद्ध ने सुझाव दिया-"बहुत अच्छा, ऐसा है तो मील भर की दौड़ भीलगाओ!"

लीला ने शिकायत के ऊंचे स्वर में बंगले की ओर पुकारा--"दीदी, आओ न ! तुम्हारी राह तकते-तकते तो चाय ठण्डी भी हो गयी।"

बंगले के भीतर से उत्तर मिला--"आई लीला, तुम प्याला बनाओ !"

बंगले के भीतर बजने वाले ग्रामोफोन मे गीत के बोल सुनाई दिये.

"धोखा खाने वाले नयना हर दम धोखा खाते हैं।

गई उमरिया बीत, न आया मन का मीत·······!"

बगले के फाटक पर कुत्ते के भौंकने की आवाज सुनाई दी।

लीला ने आहट पाकर घूमकर फाटक की ओर देखा।

फाटक से रणजीत और केशव आते दिखाई दिये। उनके पीछे एक कुली उनके बरसाती कोट और टैनिस खेलने के बल्ले उठाये था। सबसे पीछे इन लोगों की पहले छोड़ी हुई रिक्शा का एक कुली आया।

लीला उल्लास में पुकार उठी--"ओहो! रणजीत भाई, आखिर आ गये!" उसने अपनी कलाई पर लगी घड़ी दिखाई और मुस्कराकर बोली, "शायद चार ही बजे होंगे, क्यों रणजीत भाई?"

रणजीत ने क्षमा मांगी—"आईम सो सारी। गेम ओवर [१] होने में देर लग गयी।"

लीला विद्रूप से हंस दी--"हाँ साहब, टैनिस खेलने वाले बड़े आदमी बैडमिन्टन खेलने वालों से क्या बात करें?"

रणजीत ने बताया—"असल में तो देर लगी रिक्शा के कारण। ह्वाट स्टुपिड फैलोज? इन्हें टाइम-सेंस है ही नहीं!" [२]

बंगले के भीतर से पुकार सुनाई दी--"कट फार पार्टनर्स!"[३]

लीला ने केशव की ओर देखा—"भाई साहब, अन्दर जाकर देखिये। आपके साथी प्रतीक्षा से ऊबकर चौथे साथी के बिना कटथरोट खेलने बैठ गये हैं। नया डील [४] हो रहा है।"

ग्रामोफोन पर फिर सुनाई दिया :

"धोखा खाने वाले नयना हरदम धोखा खाते हैं,
गई उमरिया बीत, न आया मनका मीत······"

लीला ने आगन्तुकों की ओर से दृष्टि हटाकर बराम्दे की ओर देखा। लीला की बड़ी बहिन शशि बराम्दे से आती दिखाई दी।

लीला ने ग्रामोफोन के गीत को लक्ष कर शशि को सम्बोधन किया—"नहीं दीदी धोखा नहीं है!" उसने रणजीत की ओर संकेत किया, "देखो, सचमुच आगये।"

[१] बहुत अफसोस है। खेल समाप्त होने में। कैसे जाहिल लोग हैं? इन्हें समय की कद्र है ही नहीं। [३] नये सिरे मे जोड़ चुनने के लिए पत्ते बाँटो। [४] नये खेल के लिये पत्ते बँट रहे है।

रणजीत लीला की बात पर मुस्करा दिया। उसने अपना सामान उठाये कुली को सामान एक कुर्सी पर रखने के लिए संकेत किया और जेब से बटुआ निकाल कर कुली को दो रुपये दे दिये।

कुली रुपये हाथ में लेकर और माथा छूकर गिड़गिड़ाया—"हजूर, कुछ बकसीस मिलता।"

केशव ने विस्मय से त्योरियां चढ़ा लीं—"अरे, आठ आना तुमको बखशीश दिया साहब ने और तुम क्या लेगा? जाओ; तुम लोग बड़ा लालची है।"

वृद्ध ने तर्जनी उठाकर समझाया—"भई, पहले डेढ़ रुपया उसे देना चाहिए था। बखशीश मांगने पर चार आने और दे देते। इससे तुम्हारे चार आने बचते और उसे अधिक संतोष होता।"

पहली रिक्शा का एक कुली रणजीत और केशव के पीछे-पीछे आकर चुपचाप एक ओर खड़ा था। वह आगे बढ़ आया।

कुली ने हाथ जोड़कर कहा—"हजूर, हमारा रिक्सा का किराया नई मिला? हजूर ने पहले हमारा रिकसा किया था।"

रणजीत झुझला उठा—"तुम्हारा रिक्सा किया था? तुमने हमको पहुंचाया? हम पैसा उसको देगा जो हमको जगह पर पहुचायेगा।"

केशव ने घृणा प्रकट करने के लिए नाक सिकोड़ ली—"ओहो, क्या जानवर हैं? मरते आदमी की फिकर नही, पैसे के लिये दौड़ा चला आया। ह्वाट ब्रूट्स।"[1]

कुली हाथ जोड़कर गिड़गियाया—"हजूर, अमारा आदमी मर जायेगा तो अम क्या करेगा?"

वृद्ध सहम गये। घबराकर बोले—"है, क्या? आदमी मर गया? क्या कहा? कहां? आदमी कैसे मर गया?"

रणजीत ने उपेक्षा से सिर हिला दिया—"ओह, नो, नो! नथिंग लाईक दैट।....ओनली ए कुली! ए माइनर ऐक्सीडेन्ट![2] ऐसे ही दम फूल कर गिर पड़ा होगा। कोई खास बात नहीं!"

[1] कैसे जानवर है? [2] नहीं, नहीं ऐसी बात नही है ....ऐसे ही एक कुली की बात है!....मामूली सी घटना!

वृद्ध ने संभलने के लिये दोनों हाथों से कर्सी की बाँहें पकड़ लीं। चिन्ता और घबराहट के स्वर में पूछा—"ऐक्सीडेन्ट ? क्या कहा, कुली दम फूल कर गिर पड़ा ?" उन्होंने कुली को सम्बोधन किया, "क्या तुम्हारी रिक्शा का आदमी था ? क्या हुआ ?"

रणजीत ने कुली को पीछे हटने का संकेत किया—"ओहो, इन लोगों का लालच देखिये।" वह कुली की ओर घूम गया, "बदन में ताकत नहीं है तो तुम रिक्शा खींचने क्यों आता है ? रुपये-आठ आने के लिए दूसरे आदमी का वक्त खराब करता है ? तुमको शर्म नहीं आता ?"

केशव रणजीत के समर्थन में कुली को धमकाने के लिये आगे बढ़ गया—"क्यों तुम ऐसा कमज़ोर आदमी लाया ? तुमने हमारा सवा घन्टे टाइम खराब कर दिया। कुछ समझता है ?"

लीला विस्मित रह गयी—"सवा घन्टे ? गुडनेस !"[१] मैं तो पैंतीस मिनिट में लाइब्रेरी से यहाँ पहुँच जाती हूँ।"

युवक तर्जनी उठाकर बोला—"अगर पच्चीस मिनिट में पहुँचा जाय तो और भी मजा आता है। दैट इज़ गुड एक्सरसाइज।[२] ज़रा शरीर खुल जाता है।"

रणजीत को युवक की बात भली नही लगी। बोला—"यू काल दैट एक्सर-साइज ? इसे आप कसरत कहेंगे ? धूल रौंदते चलना ? वाह, एक्सर-साइज के लिये आप गोल्फ खेलिये या टैनिस खेलिये !"

बंगले के भीतर से ब्रिज खेलने वालों की आवाजें :
"ये मारा !"
"शाब्बास मेरे शेर !"

केशव ब्रिज में शामिल होने की व्यग्रता में लीला से बोला—"भई मैं गेम जाइन[३] कर रहा हूँ। मेरे लिये चाय वहीं भिजवा देना।" वह भीतर चला गया।

वृद्ध ने आंखें मूंद कर आकाश की ओर हाथ जोड़ते हुए कहा—"हे भगवान ! मुझे कभी लोगों के कंधों पर चढ़कर न चलना पड़े ! मेरी ऐसी

[१] भला हो। [२] अच्छा व्यायाम हो जाता है। [३] खेल में शामिल होना

अवस्था कभी न हो। इससे पहले ही मुझे अपनी दयामय गोद में बुला लेना!"

शशि आकर एक कुर्सी पर बैठ गई थी। वह कुली के सम्बन्ध में होती बातचीत को ध्यान से सुनती चुप थी। उसके चेहरे पर घबराहट के चिन्ह आगये थे। उसने निढाल होकर गर्दन हिलाई जैसे गरमी से दिल घबरा गया हो।

शशि ने सीने पर हाथ रखकर कहा—"क्षमा कीजिये, मैं जरा भीतर जाऊँगी।"

रणजीत ने शशि की ओर देख कर आत्मीयता की मुस्कराहट से पूछा—"क्या बैडमिंटन में थकान अधिक हो गयी?"

शशि ने रणजीत की बात का कोई उत्तर नही दिया। हाथ आँखों पर रख सिर कुर्सी की पीठ से टिका लिया।

लीला ने रणजीत को चुप रहने का संकेत किया—"रहने दीजिये। दीदी अभी ठीक हो जायगी।"

रणजीत ने लीला से धीमे स्वर में पूछा—"क्यों? क्या बात है?"

लीला ने रणजीत की ओर झुक कर धीमे से बताया—"कुछ नहीं। शायद, वही कुली की बात है। बहुत भावुक हो गयी है दीदी। उस दिन बिल्ली ने कबूतर को पकड़ लिया था तो यह बेहोश हो गयीं।.... दिन भर खाना नहीं खा सकीं। ऐसा कुछ देखती-सुनती हैं तो इन्हें ऐसा ही होने लगता है।"

रणजीत बात समझकर परिस्थिति सम्भालने के विचार से बोला—"ओह, हूँ, अच्छा, अच्छा।" उसने शशि को सुना सकने के लिये ऊँचे स्वर मे कुली को पुकारा, "एई, देखो! यहाँ आओ! फिर ऐसा मत करना!" बटुए में से एक नोट निकाल कर कुली की ओर बढ़ाया, "यह लो, पांच रुपया! जाओ सिर न खाओ!" वह लीला की ओर घूम कर धीमे स्वर में बोला, "आई थिंक इट इज आल राइट नाओ?"[१]

वृद्ध ने पूछ लिया—"क्या पांच रुपये दे दिये? अच्छा किया।" यू आर वैरी काइंड। उन्होंने कुली को सम्बोधन किया, "देखो, जाकर उस

[१] मेरा खयाल है कि अब तो ठीक है न।

आदमी को खूब गरम-गरम दूध पिलाओ। तुम लोग बहुत कड़ी मेहनत करते हो। तुम लोगों को अच्छी खुराक खाना चाहिये।" उन्होंने लीला की ओर देखा, "बेटा छः बज गये होंगे। मैं घूम आऊं। जरा बदलू को आवाज देना, मेरी छड़ी तो दे जाये।"

लीला ने वृद्ध की कुर्सी की पीठ के पीछे लटकती छड़ी उठाकर सामने करदी—"डैडी, भूल गये. बदलू छड़ी तो पहले ही रख गया है। आपका ओवरकोट ला दूं; लौटते समय सर्दी हो जायगी।"

वृद्ध छड़ी के सहारे उठते हुए बोले—"न, न, बेटा। ओवरकोट से बोझ हो जाता है। चलने में सर्दी कहां मालूम होती है? बैठने पर ही जाड़ा लगता है।"

वृद्ध सैर के लिये बंगले के फाटक की ओर चले गये।

लीला ने वृद्ध के कुर्सी से उठते ही शशि की कुर्सी के समीप आकर रणजीत को सम्बोधन किया—"रणजीत भाई, आप भी क्या दीदी की तरह ब्रिज में जाइन नहीं करेंगे?"

रणजीत ने कंधे उचका कर समर्थन की आशा से शशि की ओर देखा—"नो, रादर नौट।[1] पत्ते पीटने से मुझे कोई सन्तोष नही होता। क्यों शशि? जरा यहाँ ओपन एयर[2] में बैठेंगे।"

रणजीत शशि के समीप की कुर्सी पर बैठ गया।

लीला बंगले के बराम्दे की ओर चल दी—"भई, मैं जाती हूं। मेरा गेम खराब हो रहा है? मैं आप लोगों के लिये चाय यहां ही भिजवा दूं?"

रणजीत ने स्वीकार किया—"ओह, दैट विल बी फाईन![3] परन्तु चाय की जरूरत जल्दी नहीं है। कुछ देर में भिजवा देना।" उसने शशि की ओर देखा, "क्यों?"

शशि ने शिथिलता से कह दिया—"नही, कोई जल्दी नही!"

लीला बंगले की ओर चली गयी।

रणजीत ने अपनी कुर्सी शशि की कुर्सी के अधिक समीप खींच ली।

रणजीत ने सहानुभूति से पूछा—"हाओ डू यू फील नाओ? लग कैसा रहा

[1] नहीं, जाने दो। [2] खुली हवा में। [3] हाँ, बहुत ठीक।

है घबराहट तो नहीं मालूम हो रही है ?"

शशि ने मुंह फेर लिया—"नहीं; कुछ नहीं, ठीक हूं ।"

रणजीत जरा मुस्कराया—"जरा सी बात पर इतना घबरा जाती हो। कितना नरम दिल है ।"

शशि आंखें झुकाये रही - "क्या ? मैं घबराई तो नहीं ।····कैसे ?····जरासी बात कैसी ?"

रणजीत ने उत्तर दिया—"वही कुली-वुली का एक्सीडेन्ट । ऐसा तो होता ही रहता है ।

शशि गम्भीर हो गयी—"हूं जरासी बात ?" वह मौन रह गयी ।

रणजीत ने शशि को मौन देख कर पुकारा—"शशि !"

शशि मौन रही ।

रणज़ीत ने आग्रह से पुकारा—"शशि !"

शशि की गर्दन और झुक गयी—"हूं"

रणजीत उत्सुकता से बोला—"क्यों ?······चुप क्यों हो ?"

शशि—"नहीं तो ।···कहिये ?···क्या कहते है ?"

रणज़ीत ने गहरी साँस लेकर कहा—"मैं चाहता हूं, आज तुम्हीं कहो !····मैं तो कई बार कह चुका, बहुत कह चुका ।"

शशि सिर झुकाये ही—"हूं, क्यों ? आज क्या थक गये ?"

रणजीत उत्साहित हो गया—"थक गया ?···क्या कहती हो शशि ?···तुमसे बात कहने में थक जाऊँगा ?··· दिस इज माई लाइफ्स एम्बिशन; यही तो मेरे जीवन की एक साध है ।"

बंगले से दूसरे रिकार्ड की आवाज आयी—

"उम्रे दराज़ माँग कर लाया था चार दिन,
दो आरज़ू में कट गये तो इन्तज़ार में ।"

रणजीत मुस्करा दिया—"यह सुनो, शशि ! रिकाड भी मेरी गवाही दे रहा है । क्या मेरी जिन्दगी सचमुच आरजू और इन्तजार में कट जायगी ?"

शशि की आँखें कहीं दूर बहुत दूर चली गयीं—"आरजू··· और··· इन्तजार ! मैं सोचती थी उसने गहरी साँस ली, "एक बहुत बड़ी आरज़ू दिल

में पैदा कर सकती और फिर जीवन के अन्त तक उसके पूरे होने की इन्तज़ार करती रहती। छोटी-मोटी आशायें और आरजुएँ किस काम की ? ……… आये दिन पूरी हो जाती हैं या बिखर जाती हैं और फिर जिन्दगी ऐसे भटकने लगती है जैसे जिन्दगी का कुतुबनुमा (दिशाद्योतक) खो गया हो !"

रणजीत ने भी शशि की भाँति भावुकता भरी गहरी साँस ली—"ओह, बट माइ केस इज़ डिफरेंट ! मेरी तो बिलकुल दूसरी ही बात है ! मेरी ज़िन्दगी की एम्बीशन आई मीन, यानि आरजू, इतनी मुश्किल है कि शायद उसे दिल में लेकर ही एक दिन आँखें बन्द कर लूंगा। आई डाई विद इट।" उसने गर्दन ऊँची कर ली, "एण्ड आई एम नाट सारी फार दैट ! इसके लिए मुझे कोई गम भी नही बिकौज आई लव यू मोर दैन माई लाइफ ![1] तुम्हारे प्रेम में अगर मेरा जीवन भी समाप्त हो जाता है तो मुझे कोई शिकायत नहीं, गम नहीं ! मुझे इसी में सन्तोष है। ओह, आइ एम हैप्पी इन पेन आफ लव।[2] मैंने दर्दे-दिल की दौलत जिन्दगी में पाई है। उसी को लेकर जिन्दगी काट रहा हूँ।" उसने और भी गहरी साँस ली, "दो आरज़ू में कट गये, दो इन्तजार में ! क्या खूब !"

शशि ने आंखें कुछ दूर सामने जमीन पर गढ़ा दीं, गहरी सांस ली और जरा मुस्कराई—"दर्द !…दर्दे-दिल !… कितने प्यारे शब्द हैं रणजीत ? सचमुच इनके रस में डूब कर जिन्दगी समाप्त हो जाये तो भी दुख न हो। सच कहती हूँ रणजीत, जब तुम इंगलैंड में थे, बृहस्पतिवार के दिन तुम्हारे पत्र की प्रतीक्षा में बराम्दे में बैठी मैं पोस्टमैन की राह देखती रहती थी ……"

रणजीत प्रसन्नता से खिल उठा—"ओह, रियली ?[3] आई एम सो हैप्पी शशि, तुम्हारा बड़ा एहसान है मुझ पर…"

शशि ने हाथ उठाकर संकेत किया—"सुनो"

रणजीत कुछ झेंप गया—"आई एम सो सारी, हां डार्लिंग ?"[4]

[1] क्योंकि मैं तुम्हें अपनी जान से अधिक प्यार करता हूँ।

[2] मैं प्रेम की पीड़ा से ही सन्तुष्ट हूँ।

[3] ओह, सचमुच, सुनकर बहुत खुश हूँ। [4] ओह, माफ करना, हाँ प्रिय।

शशि रणजीत से आंखें बचाये बोली —"मैं पोस्टमैन की इन्तजार में बैठी रहती। लोग खाना खाने के लिये बुलाते तो मुझे लगता, व्यर्थ मे सता रहे हैं। पोस्टमैन मुझे न देखेगा तो शायद पत्र देना भूल जायगा। बार-बार घड़ी देखती। लगता घड़ी स्लो चल रही है। मैं पेड़ों की छाया की ओर देखकर समय का अनुमान करती··· "

रणजीत उत्साह से गहरी सांस ले बोल उठा —"ओह, आई एम सो ग्रेटफुल[1] शशि, मेरे कारण तुम्हें इतना कष्ट·······"

शशि ने चुप कराने के संकेत में हाथ उठा लिया—"सुनो !"

रणजीत फिर झेंप गया—"ओह, आई एम सो सारी।"

शशि—"जब पोस्टमैन डाक दे जाता और तुम्हारा पत्र न होता तो मैं निराशा की चोट से घायल होकर बिस्तर पर औंधे मुंह लेट जाती····"

रणजीत ने प्रसन्नता दबाकर बहुत गहरी सांस ली—"ओह माई लव, आइ एम सो सारी ! शशि तुम्हारे पत्र के लिये मै लदंन मे डाकखाने तक··· "

शशि ने फिर चुप कराने के सकेत में हाथ उठा दिया और गहरी साँस ली—"अब याद आता है तो सोचती हूँ, कितने मीठे और अच्छे स्वप्न थे वे!"

रणजीत ने उत्साह से कहा—"शशि मैं तो तुम्हारी याद में व्याकुल होकर हाइड-पार्क में जा बैठता था। एण्ड आई लास्ट माइसेल्फ इन ड्रीम्स!'[2]

शशि ने फिर कहा—"तुम्हारा पत्र समय पर न आता तो मैं खा न सकती, सो न सकती और फिर·· "

रणजीत ने उसे उत्साहित किया—"हाँ फिर ?"

शशि ने अतीत की बात याद करने के लिये आकाश की ओर देखा—"सुबह नाश्ते के लिये खाने के कमरे में न जाती तो खानसामा ट्रे मे नाश्ता लगाकर मेरे कमरे में रख जाता। मुझे खानसामा पर क्रोध आ जाता; क्या खाना ही सब कुछ है ? पेट में ठूस लेना ही सब कुछ है ? ···क्यों खाये इन्सान ?·······दुख में जिन्दा रहने में ही क्या सुख है ? मैं खाने का सामान खिड़की से बाग मे फेक देती·······"

रणजीत ने बहुत गहरी फुंकार से सांस छोड़ी—"रियली ? आई एम सो सारी ! तुम्हारी याद मे मुझे तो खाना अच्छा ही न लगता था। शैम्पेन तक अच्छी नहीं लगती थी। शशि, जुदाई के वे दिन कितने

[1] ओह, मैं तुम्हारे प्रति बहुत कृतज्ञ हूँ। [2] मैं स्वप्नो में खो जाता था।

हारिब्ल [1] थे ? और कई हजार मील का डिस्टेंस [2] !··· इतनी की जुदाई ?····आइ एम हैप्पी ।[3] वह खत्म हो गयी" शशि को उठाते देख, "हाँ फिर ?" वह सुनने लगा ।

शशि आंखें बचाये बोली—"माली और साइस के बच्चों को मालूम था कि मैं खाना खिड़की से फेंक देती हूँ। बच्चे फेंका हुआ खाना उठाने के लिये दौड़ आते। बच्चों में उन टुकड़ों के लिये झगड़ा हो जाता और फिर इस वजह से उनकी माताएँ आपस में लड़तीं "

रणजीत रस भंग मे विक्षिप्त होकर टोक बैठा—"उफ, ब्रूट्स ! जानवार कहीं के। इन लोगों से सैन्टीमेट और फीलिंग [4] की आशा नही की जा सकती। हाँ फिर ?"

शशि ने आह भरी—'फिर मैं सोचती—काश, यह लोग दर्दे-दिल का मजा जानते तो इन टुकड़ों पर जान क्यों देते ? प्रेम मे डूब कर खाना भूल जाने का मजा इन्हें नहीं मालूम ।"

रणजीत मुस्करा दिया—"खूब, शशि तुम बड़ी मसखरी हो ! फाइन ?"

शशि नहीं मुस्करायी—"फिर मुझे नींद न आती। मैं प्रेम की ऊष्णता से तप हुए सिर पर ठंडी वायु का स्पर्श अनुभव करने के लिये खिड़की सिर रखे पड़ी रहती और सुनती····"

रणजीत ने कौतूहल से पूछा—"क्या सुनती ?"

शशि आंखें झुकाये कहती गयी—"भैया क्लब से आधी रात बीते लौटते । गुनगुनाते हुए आते :

"लखते जिगर खाने को है, खूने जिगर पीने को ।
यह गिज़ा मिलती है, लैली तेरे दीवाने को !"

रणजीत ने उल्लास से टोक दिया—"ओ फाइन, रियली [5] और फिर ?'

शशि—"और····एक और सुरीली, बहुत धीमी सी आवाज सुनाई देती, हजूर आ गये ? इस आवाज को मैं पहचानती थी ।"

रणजीत रहस्य तथा कौतूहल मे शशि की ओर झुक गया—"किस की आवाज थी वह शशि ?"

[1] भयंकर [2] दूरी [3] मैं प्रसन्न हूँ [4] सहृदयता और भावुकता ।
[5] खूब, सचमुच ।

शशि का स्वर नहीं बदला—"हमारे कश्मीरी बावरची की बड़ी लड़की नसीरन की।"

रणजीत उल्लास और कौतूहल से ज़रा ऊंचे बोल उठा—"रियली; सच ?"

शशि फिर वैसे ही तटस्थ स्वर में बोली "भैया पूछते नसीरन, अभी तक जाग रही हो ?"

रणजीत ने उत्सुकता से पूछा, "यस दैन ?[१]

शशि बोली—"उत्तर न पाकर, भैया फिर पूछते, नसीरन उदास क्यों हो ? अच्छा, मुस्कराओ एक बार !"

रणजीत का स्वर पुलक से भर गया—"ओहो, माई जोव[२] ! सचमुच ? बड़े दिल-फेंक हैं। खूब; अच्छा फिर ?"

शशि सिर झुकाये रही—"फिर कदमों के पास-पास होने की आहट और नसीरन का नखरे से भरा स्वर—न—ना—नहीं !"

रणजीत ने उत्सुकता से सांस रोक ली—"दैन ?····फिर ?"

शशि वैसे ही स्वर में बोली—"फिर दो-चार रुपयों के खनकने की आवाज आती और जैसे नन्हे से बच्चे के मुंह पर प्यार करने से आती है।"

रणजीत ने उत्साह से अपनी जांघ पर हाथ पटक लिया—"ओह, माई गुडनैस, वैरी रोमान्टिक, कमाल है। दैन, हाँ फिर ?"

शशि का स्वर बदल गया—"यह सब सुनकर तुम्हें बहुत रस मिल रहा है रणजीत ?"

रणजीत का स्वर झेंप से दब गया—"नो, नो; सर्टेनली नाट।[3] मुझे बहुत बुरा लग रहा है।"

शशि—"हूँ !" वह पल भर को रुकी, "मुझे भैया के लिये बहुत दुख होता था। उनका विवाह होने में कुछ ही दिन शेष थे। मैं सोचती थी, वे नसीरन से प्यार करते हैं। डैडी उनका विवाह जबरदस्ती दूसरी जगह कर रहे हैं। यह अन्याय है।"

रणजीत ने चिन्ता प्रकट की—ओह, दैट वाज़ रियली ए प्राब्लेम। दैन ?[४]

शशि ने फिर गहरी सांस ली—"तब मुझ से एक अपराध हो गया। मैं अपने आपको वश में न रख सकी।"

[१] हाँ, तो ? [२] मेरी कसम ! [3] बिलकुल नहीं, कभी नहीं। [४] यह तो वास्तव में समस्या थी, खैर फिर ?

रणजीत ने विस्मय से पूछा—"क्या ?"

शशि ने बताया—"मैं बाज़ार की ओर जा रही थी। भैया ने एक पत्र पोस्ट कर देने के लिये मुझे दिया था। बारिश अधिक थी। मैं छतरी सम्भाले पत्र को लेटर बक्स में डालने लगी परन्तु वह बाहर कीचड़ में गिर गया। भीग कर पते की स्याही फैल गयी।"

रणजीत ने टोक दिया—"वैरी सैड, ह्वाट एन एक्सीडेंट !"[१]

शशि उसे सुनने का संकेत कर कहती गयी—"बड़ी शर्म मालूम हुई। दूसरा लिफाफा लेकर उस पर पता लिखने के लिये पता देखा। पता हमारी भावी भाबी का था। पत्र में केवल दो लाइनें देखकर विस्मय हुआ। आँखे उस पर फिर गईं। लिखा था:

"चाद,

"एक हूक सी दिल में उठती है, एक दर्द सा पैदा होता है।
हम जब बैठ कर रोते हे, तब सारा आलम सोता है। तुम्हारा पत्र क्यों नहीं आया ?"

रणजीत मुस्करा दिया—"स्ट्रेंज !"[२]

शशि कहती गयी—"बहुत बुरा लगा। भैया भाबी को भी धोखा दे रहे हैं और नसीरन को भी !"

रणजीत ने गम्भीरता से समर्थन किया—"सर्टेनली ! दिस वाज बैड !"[३]

शशि का स्वर जरा कड़ा हो गया—मैंने सोचा, यह धोखा भैया के दर्दे-दिल की दवा है। नसीरन के मन और शरीर को प्यार कर सकने का मोल कुछ रुपये है। सब कुछ खरीदा जा सकता है। आदमी को कैसे खरीद लिया जाता है। सोचा, तुम भी इंगलैण्ड में वही कर रहे होगे।"

रणजीत विरोध में गम्भीर हो गया—"नो शशि, आइ एम ए डिफरेंट मैन।[४] मेरे दर्दे-दिल का मोल रुपया नहीं है। मेरे दर्दे-दिल का मोल है मेरा अपना दिल। मेरी जान, मैं न खरीदता हूं, न बेचता हूं।"

शशि का स्वर स्पष्ट और ऊंचा हो गया—"हाँ, अब तक मैं भी ऐसा ही

[१] अकस्मात घटना समझो ? [२] क्या विचित्र बात। [३] निश्चय ही यह तो बुरी बात थी। [४] नहीं मैं दूसरी तरह का आदमी हूँ।

समझती थी लेकिन अब दूसरी बात देख रही हूं।"

रणजीत ने शशि से आँखें मिलाने का यत्न कर पूछा—"मैंने कभी तुम्हारे साथ मोल-तोल की बात की ?"

शशि की गर्दन सीधी हो गयी—"रणजीत, मुझे खरीदना संभव नहीं क्योंकि मैं भूख से विवश नहीं हूं। तुम अपनी समर्थ भर ही खरीद सकते हो।"

रणजीत ने विस्मय प्रकट किया—"क्या मतलब ? मैं क्या खरीदता हूँ ?"

शशि मुस्करा दी—"तुम ? तुमने मेरा दिल और विश्वास खरीदना चाहा; मनुष्यता से नहीं, पांच रुपये से। एक आदमी की जान की कीमत पांच रुपये लगा कर !" शशि गंभीर हो गयी। उसकी दृष्टि क्षितिज पर चली गयी।

रणजीत ने विरोध किया—"क्या कहती हो !....कैसे ? यू ओर इन्सल्टिंग मी।"[1]

शशि उसी प्रकार निश्चल रही—"उस कुली की जान की कीमत तुम्हारी दृष्टि में क्या थी ? जैसे कोई कीड़ा पांव तले कुचल गया हो परन्तु मुझे रिझाने के लिये तुमने उसके प्रति पांच रुपये की सहृदयता दिखा कर अपनी हृदयहीनता प्रकट कर दी। तुम समझते हो, मेरे विचार में मनुष्य का मूल्य इतना ही है ?" उसने रणजीत की ओर देखा। और उत्तेजना मे उठकर चल पड़ी।

रणजीत आतुरता मे बोल उठा—"शशि, लिसन ! सुनो ! एक बात सुनो !"

शशि ने रणजीत की ओर घूमकर देखा—"क्या है ?"

रणजीत ने अनुनय भरी दृष्टि से अनुरोध किया—"क्या मेरे प्यार का, मेरे दर्दे-दिल का यही बदला है ?"

शशि मुस्करायी पर माथे पर त्योरियां आ गयीं—"ओंह दर्दे-दिल !....हूं ?" उसने बिदाई के संकेत में बांह उठा कर हाथ हिलाया, "अलविदा दर्दे-दिल ! गुड-बाई दर्दे-दिल !"

शशि तेज कदमों मे बगले की ओर चली गयी।

(पटाक्षेप)

---

[1] तुम मेरा अपमान कर रही हो।